

आर्यभट्ट

विज्ञान-पत्रिका

अप्रैल
१९९०

विज्ञान महाविद्यालय

सम्पादक
डा० विजय शंकर

पुराणों में पर्यावरण

१. अग्नि पुराणः—यदि कोई व्यक्ति अपने वंश, धन और सुख में वृद्धि की इच्छा रखता है तो वह फल-फूल वाले किसी वृक्ष को न काटे। जो व्यक्ति दस कुएँ खुदवाता है, उसे एक तालाब खुदवाने का पुण्य मिलता है। जो दस तालाब खुदवाता है उसे एक झील खुदवाने का पुण्य मिलता है; १० झीलें बनाने वाला व्यक्ति एक देशभक्त उत्पन्न करने का पुण्य प्राप्त करता है। किन्तु १० देशभक्त उत्पन्न करने का पुण्य एक वृक्ष लगाने के पुण्य की अपेक्षा छोटा है।

२. मत्स्य पुराणः—एक वृक्ष का आरोपण १० पुत्रों के बराबर है।

३. वराह पुराणः—'पंचाम्रवापी नरकं न याति' अर्थात् आम के पांच पौधे लगाने वाला व्यक्ति कभी नरक नहीं जाता है।

४. विष्णु धर्मसूत्र—एक मनुष्य द्वारा पालित-पोषित वृक्ष का महत्व एक पुत्र के समान है। देवगण इसके पुष्पों से, यात्री इसकी छाया में बैठकर, मनुष्य इसके फल-फूल खाकर इसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

५. पद्म पुराणः—जो मनुष्य सड़क के किनारे छायादार वृक्ष लगाता है वो स्वर्ग में उतने ही समय तक सुख भोगता है जितने समय तक वृक्ष फलता-फूलता रहता है।

प्रकाशक

डा० वीरेन्द्र अरोड़ा

कुलसचिव

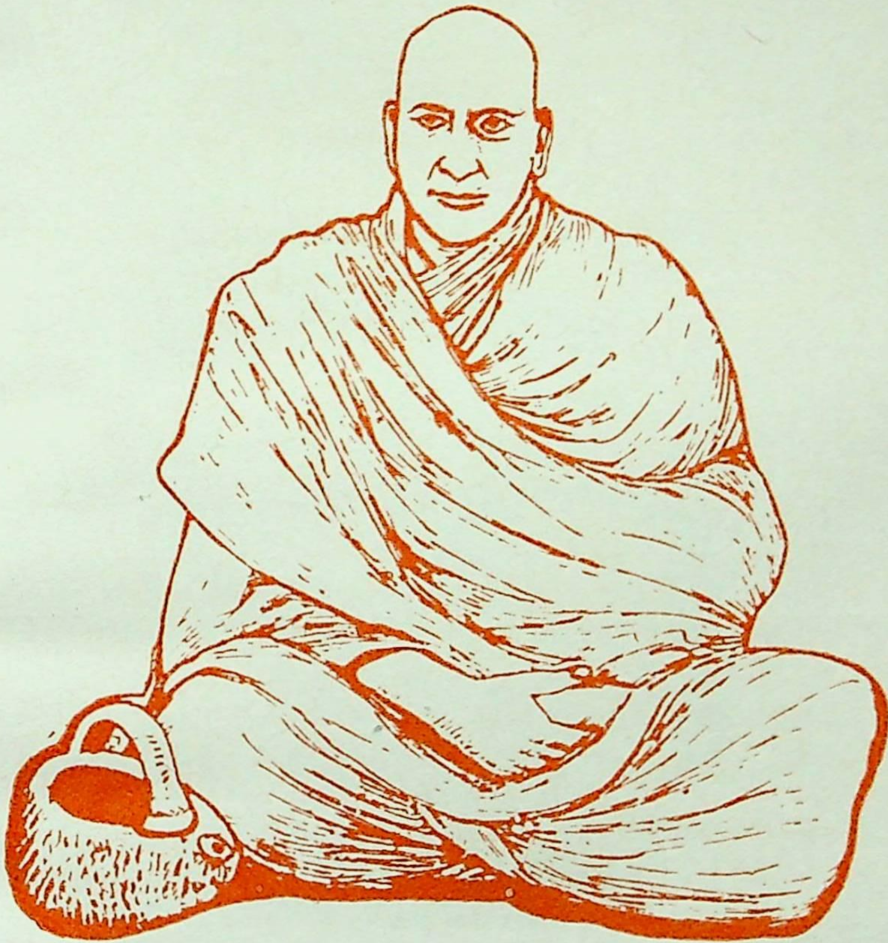
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

हरिद्वार

मुद्रक

जैना प्रिंटर्स

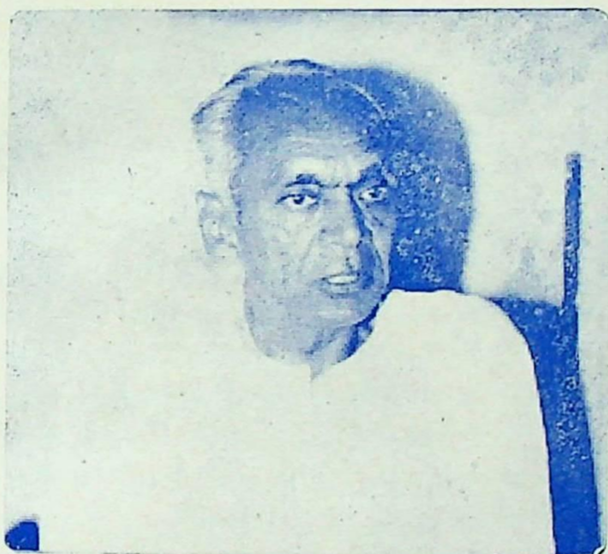
ज्वालापुर



विश्वविद्यालय के संस्थापक : स्वामी श्रद्धानन्द

बलिदान तिथि २५ दिसम्बर १९३०

(जन्म—फरवरी, १८५६)



विश्वविद्यालय के नये कुलपति
श्री सुभाष विद्यालंकार

आर्यभट्ट विज्ञान-पत्रिका

इस अंक की विशेषता—पर्यावरण

पूरे विश्व में वर्तमान पीढ़ी अपने पर्यावरण की सुरक्षा को लेकर चिन्तित है। यह कहा जा रहा है कि यदि हम अपने पर्यावरण का-वनों का, वृक्ष-वनस्पतियों का, जन्तुओं का, जलवायु का, भूमि का प्रबन्ध ठीक से नहीं करते, संरक्षण नहीं करते, विकास के नाम पर उन पर बराबर प्रहार करते रहेंगे नष्ट करते रहेंगे, तब एक दिन निश्चित आयेगा जब मनुष्य का पृथ्वी पर जीवित रहना भी कठिन हो जायेगा। अतः समय रहते हमें जाग जाना चाहिये। पर्यावरण के वे घटक, जिनके कारण पृथ्वी पर मानव एवं अन्य प्रकार के जीवन बने हुए हैं, अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ये घटक पृथ्वी पर मानव के जीवित रहने के लिये अत्यावश्यक हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए पत्रिका के इस अंक में पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं (वैदिक समय से वर्तमान तक) पर लेख प्रस्तुत हैं। विकास कार्यों और पर्यावरण में सन्तुलन बनाये रखना आवश्यक है। आज इसी को लेकर बड़े बांध एवं बिजलीघर बनाने की बुद्धिमत्ता पर प्रश्नचिन्ह लग चुका है। भारत में भी टिहरी और नर्मदासागर बांध विवाद की परिधि में आ गये हैं। इस पत्रिका में इन विषयों पर भी विचार प्रस्तुत किये गये हैं। ये लेखकों के अपने विचार हैं। सम्पादक या विश्वविद्यालय इनके लिये उत्तरदायी नहीं हैं। पाठकों से निवेदन है कि वे पर्यावरण सम्बन्धी ज्वलन्त समस्याओं पर अपने विचार प्रस्तुत करते रहें और पर्यावरण संरक्षण एवं समृद्धि के लिये सुझाव देते रहें जिससे पत्रिका पूर्व की भांति पर्यावरण शिक्षा के क्षेत्र में अपना बिनम्र योगदान देती रहे।

—सम्पादक

———

विषय सूची

श्री सुभाष विद्यालंकार का संक्षिप्त विवरण

श्री सुभाष विद्यालंकार ५० से भी अधिक वर्षों से गुरुकुल कांगड़ी से सम्बद्ध रहे हैं। माता-पिता ने बचपन में ही इन्हें गुरुकुल कांगड़ी में प्रविष्ट करा दिया था। गुरुकुल कांगड़ी की शिक्षा विधिवत् पूर्ण करने के पश्चात् १९४९ में उन्हें विद्यालंकार की उपाधि प्रदान की गई। छात्र जीवन में वे विश्वविद्यालय के कुल-मन्त्री पद पर कार्य करने के अतिरिक्त गुरुकुल की सांस्कृतिक एवं साहित्यिक गतिविधियों में प्रमुख रूप से भाग लेते रहे। खेल-कूद में भी उनकी गहरी रुचि रही। विद्यार्थी जीवन में उन्होंने दो बार पर्वतारोहण दलों का नेतृत्व भी किया। तैरना, वन भ्रमण, प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध तथा पत्रकारिता उनके छात्रजीवन की विशिष्ट गतिविधियाँ थीं।

गुरुकुल से स्नातक बनने के पश्चात् उन्होंने पुस्तक प्रकाशन और सम्पादन का पैतृक व्यवसाय संभाला।

उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से संस्कृत विषय में एम०ए० की परीक्षा सम्मान सहित प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। दिल्ली विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन किया तथा भारत सरकार के विदेश भाषा विद्यालय में रूसी भाषा एवं साहित्य का उच्च अध्ययन भी किया।

वे संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित अखिल भारतीय परीक्षा में भारतीय सूचना सेवा (इण्डियन इन्फारमेशन सर्विस) के लिए चुने गए। भारत सरकार की सेवा में उन्होंने २७ वर्षों तक अनेक पदों पर कार्य किया। इस दौरान उन्होंने आकाशवाणी के समाचार विभाग, पत्र सूचना कार्यालय (प्रैस इन्फारमेशन ब्यूरो), प्रकाशन विभाग (पब्लिकेशन डिविजन), योजना आयोग (प्लानिंग कमीशन) और दिल्ली प्रशासन में विभिन्न पदों पर सम्पादन और प्रकाशन की जिम्मेदारियाँ सफलतापूर्वक निभाईं। १९७८ में दिल्ली प्रशासन ने उन्हें निदेशक, जनसम्पर्क (डाइरेक्टर, पब्लिक रिलेशन्स) के पद पर कार्य करने हेतु बुलाया, उन्होंने इस पद की जिम्मेदारी पूर्ण उत्तर-दायित्व और निष्ठा के साथ निभाईं। किन्तु शासन परिवर्तन के कारण उन्हें नई सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा इसलिए उन्होंने १९८० में अपनी इच्छा से नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया।

२७ वर्षों से भी अधिक के सेवाकाल में उन्होंने प्रशासन, शिक्षा, पत्रकारिता,

जनसम्पर्क, संस्था प्रबन्ध एवं कानून की अनेक शाखाओं, विशेषकर प्रशासनिक विधि (एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ) में विशेष योग्यता और अनुभव प्राप्त किए।

त्याग-पत्र देने के पश्चात् उन्होंने कानून के क्षेत्र में कार्य करने का निश्चय किया और अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त देश के प्रमुख विधिवेत्ता डा० लक्ष्मीमल सिंघवी के निर्देशन में देश के सर्वोच्च न्यायालय एवं दिल्ली उच्च न्यायालय में वकालत प्रारम्भ की। १९८५ में भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण (सेन्ट्रल एडमिनिस्ट्रेटिव ट्रिब्यूनल) स्थापित कर दिए जाने पर श्री विद्यालंकार ने प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में अपना ध्यान केन्द्रित किया और इस क्षेत्र में अनेक उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त कीं।

वैदिक साहित्य, योग, दर्शन, संस्कृत-साहित्य, प्रशासनिक विधि, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, राष्ट्रीय घटनाओं तथा अध्यात्मिक साहित्य के अध्ययन में उनकी गहरी रुचि है। वैदिक साहित्य के प्रचार और प्रसार के लिए उन्होंने वेद प्रतिष्ठान के अधीन चारों वेदों का सरल अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करने की योजना १९७५ में प्रारम्भ की थी। इस योजना के अधीन ऋग्वेद संहिता के १३ खण्ड प्रकाशित किये जा चुके हैं। इसके अधीन चारों वेदों का प्रकाशन ३० खण्डों में पूरा होगा। आर्य समाज के क्षेत्र में भी उनका योगदान उल्लेखनीय है। दिल्ली की प्रमुख आर्य समाज, हनुमान रोड के वे अनेक वर्षों तक मन्त्री और उप-प्रधान रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्होंने सदैव व्यक्तिगत रुचि ली है। दिल्ली में आर्य समाज की प्रमुख शिक्षा संस्था रघुमल आर्य कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के वे अनेक वर्षों तक अवैतनिक प्रबन्धक रहे हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश की प्रमुख एवं प्राचीन शिक्षण संस्था मेरठ कालिज की प्रबन्ध समिति के वे आजीवन सदस्य हैं। वे मेरठ कालिज की कार्यकारिणी के भी अनेक वर्षों तक सदस्य रहे हैं। शिक्षा और आर्य समाज के क्षेत्र में उनके क्रियात्मक योगदान और रुचि को ध्यान में रखकर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलाधिपति डा० सत्यकेतु विद्यालंकार ने १९८८ में श्री सुभाष विद्यालंकार को इस विश्वविद्यालय की शिष्ट परिषद् का सदस्य मनोनीत किया था।

सम्पादकीय

पर्यावरण संरक्षण आवश्यक क्यों ?

"पर्यावरण से हमारा तात्पर्य अपने या किसी भी जीव या जीवसमूह के बाहर विद्यमान परिवेश, समस्त वस्तुओं, पदार्थों एवं कारकों के समुच्चय या सम्मिश्रण से है, जैसे—जल, वायु पृथ्वी, धुआँ, ध्वनि, मोटर, रेल, वायुयान, जन्तु-वनस्पति, मनुष्य आदि।

मनुष्य के द्वारा की गई अनेक क्रियाओं के फलस्वरूप आज पर्यावरण में ऐसे परिवर्तन आ रहे हैं जो समस्त प्रकार के जीवन के लिये हानिकारक हैं। इस प्रकार हमारा पर्यावरण दूषित हो रहा है। इस समस्या की ओर आज पूरे विश्व का ध्यान आकृष्ट हुआ है।

वर्तमान जगत की यह समस्या जो भयावह रूप से मानव सभ्यता को निगल जाने के लिये अपने पँजे बढ़ा रही है, प्रदूषण की समस्या है। प्रत्येक व्यक्ति की पर्यावरण के प्रति सहनशीलता की निश्चित सीमायें हैं और जब कोई कारक इन सीमाओं से अधिक मात्रा में उपस्थित होता है, उसे प्रदूषण कहते हैं। इससे निबटने के लिये, वातावरण में इस विष-वमन की प्रतिक्रिया को रोकने के लिये सभी देशों की सरकारें प्रयत्नशील हैं। इस विष को पीने के लिये भगवान शिव की तरह सबसे अधिक सफल माध्यम वृक्ष पाये गये हैं। इनकी पत्तियाँ वायु में मिले प्रदूषण पदार्थों के सूक्ष्म कणों को रोक और सोख़ लेती हैं। पत्थर के कोयले से उत्पन्न प्रदूषण रोकने के लिये "जंग़ल जलेबी" नामक वृक्ष का सघन रोपण बहुत लाभकारी पाया गया है। यह धुँए की सांद्रता में लगभग "२७ प्रतिशत" की कमी और सल्फर डाय-आक्साइड की सांद्रता में "८० प्रतिशत" की कमी करने में समर्थ पाया गया। शक्तिचालित वाहन, जैसे—कारें, ट्रक एवं बसें भी प्रदूषण के स्रोत हैं। यदि सड़कों और मकानों के बीच १० मीटर चौड़ी तथा ६ मीटर ऊँची हरित पट्टिका का विकास किया जाये तो मार्गों से आने वाले कार्बन मोनो आक्साइड की मात्रा में "४४ प्रतिशत" कमी हो जाती है।

वायु के समान जल भी प्रदूषण से मुक्त नहीं है। कारखानों से निकलने वाले नाना प्रकार के प्रदूषक पदार्थ नदियों में प्रवाहित किये जाते हैं। इसीलिये कानपुर के निकट गंगा और कलकत्ता के निकट हुगली नदी प्रदूषण का शिकार हैं। इस समय भारत के १३ नगर जल प्रदूषण से ग्रस्त हैं। कारखानों से निकलने वाले अनेक ट्रेस एलोमेंट नदी के जल में प्रवाहित हो जाते हैं जिनमें से कुछ पौधों और जन्तुओं में मेटाबोलिक एरर पैदा कर देते हैं जिससे कई प्रकार के रोग हो जाते हैं जैसे कैंसर, हृदय रोग, स्नायु रोग एवं पेट के रोग।

प्रदूषण के लिये प्रायः जनसंख्या को उत्तरदायी माना जाता है। बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकता की पूर्ति के लिये अधिक औद्योगीकरण किया जाता है जिससे प्रदूषण में वृद्धि होती है। किन्तु आज हम देखते हैं कि अनेक विकसित देशों में जनसंख्या कम होने पर भी प्रदूषण अधिक जनसंख्या वाले देशों की तुलना में अधिक है क्योंकि वहाँ प्रति व्यक्ति आवश्यकता अधिक है। अतः वास्तविक दोष तृष्णा का है। शायद इसीलिये हमारे वैदिक ऋषियों ने "इदन्नमम" को इतना महत्व दिया है।

वातावरण संरक्षण

प्रदूषण को कम करने के अतिरिक्त पौधों का वातावरण-संरक्षण में भी अत्यधिक महत्व है। वृक्षों का बेहिसाब काटा जाना, जंगल के जंगल साफ कर देना प्रकृति में असन्तुलन पैदा कर देता है। इसके दूरगामी परिणाम होते — भूमि का 'अपरदन' प्रारम्भ हो जाता है, भूमि कृषि के 'अयोग्य' हो जाती है। ताप-नियन्त्रण एवं 'जलचक्र'' नियन्त्रण बिगड़ जाता है, जन्तुजीवन के प्राकृतिक निवास एवं वनसंपदा नष्ट हो जाते हैं। प्रत्यक्ष है कि वातावरण-संरक्षण और वृक्षों का गहरा सम्बन्ध है। "रक्षया प्रकृति पातु लोकाः।" ब्रह्मोपनिषद् का यह वाक्य मनुष्य को सदैव याद रखना पड़ेगा अन्यथा विनाश का वह मार्ग जिस पर वह चल पड़ा है उसे कहीं का नहीं छोड़ेगा।

वेदों में पर्यावरण संरक्षण

असंबाधं बध्यतो मानवानां यस्या उद्वत प्रवतः समं बहु।
नाना वीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्तां नः॥

अथर्व० १२/२

वनस्पतियों से युक्त पृथ्वी ही कल्याण करने वाली है

पृथ्वी के ऊँचे भाग, अर्थात् पर्वत, समतल भाग और निम्न भाग नाना गुणों वाली औषधियों से परिपूर्ण हों। ऐसी नाना गुणों से युक्त वनस्पतियों से

मण्डित पृथ्वी ही मनुष्यमात्र का कल्याण करने वाली होती है। जब पृथ्वी के उक्त तीनों भाग वनस्पतियों से नंगे हो जाते हैं तो पृथ्वी मनुष्य का कल्याण करने में असमर्थ हो जाती है।

विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठाहिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।
वैश्वानरं बिभ्रति भूमिरग्निमिन्द्रऋषभाद्रविणे नो दधातु ॥
अथर्व० १२/६

भूमि सम्पूर्ण सम्पदाओं की जननी है

यह पृथ्वी समस्त विश्व का भरण-पोषण करती है यह सभी प्रकार के ऐश्वर्यों को धारण करती है, इस पृथ्वी की छाती में सभी स्वर्ण आदि धातुयें विद्यमान हैं, इसी में समस्त प्रकार की अग्नियाँ भी रहती हैं। यह धन एवं सभी को बल प्रदान करती है। अर्थात् ऐसी भूमि की हमें रक्षा करनी चाहिये।

गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यंते पृथिवीस्योनमस्तु।
बभ्रुं कृष्णां रोहिणी विश्वरूपां ध्रुवां भूमि पृथिवामिद्रगुप्ताम्
अजीतोऽहतो अक्षतोऽध्यष्ठां पृथिवीमहम् ॥ अथर्व० १२/११

पृथ्वी की रक्षा कर, वह तुम्हें दीर्घजीवी बनाएगी

हे मानव ! भूरे रंग वाली, काले रंग वाली और लाल रंग वाली पृथ्वी क्रमशः भरण-पोषण, कृषियोग्य और अत्यन्त उपजाऊ होती है एवं रमणीय पर्वतमालाओं एवं नाना प्रकार के वनों से परिपूर्ण रहती है। ऐसी भूमि मनुष्य को पूर्ण आयु प्रदान करती है एवं स्वस्थ रखती है।

यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा।
पृथिवी विश्वधायसं धृतामच्छा वदामसि ॥
अथर्व० १२/२७

नाना प्रकार के वृक्ष और वनस्पतियों से मण्डित पृथ्वी

जिस भूमि पर सदा बहुत बड़े वन और जंगल तथा नाना प्रकार की वनस्पतियाँ स्थिर रूप में रहती हैं, जिसके पेड़ों को कभी भी नहीं काटा जाता है, वह पृथ्वी सभी की पालना एवं रक्षा करती है, हम उसको नमस्कार करते हैं।

यते भूमे विखनामि क्षिप्रेतदपि रोह तु ।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम् ॥
अथर्व० १२/३५

बिना प्रयोजन के भूमि को न खोदें

हे भूमि हम तेरे जिस भाग को खोदें, वह शीघ्र हो हरा-भरा हो जाये अर्थात् पौधों को इस तरह न काटें कि वह फिर से न उग सकें। लोहा, कोयला आदि पदार्थों के निमित्त हमें भूमि को खोदना पड़ता है परन्तु उसे सावधानी से खोदें। पृथ्वी अन्वेषण करने योग्य है परन्तु भूमि की रोहण शक्ति को हम नष्ट न करें। उसे व्यर्थ में न खोदें (अन्यथा इससे भूमि अपरदन होगा)।

शिलाभूमिरश्मा पांसुः सा भूमिः संधृता धृता ।
तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरे नमः ॥
अथर्व० १२/२६

पृथ्वी के विभिन्न रूप

वह पृथ्वी शिला, पत्थर, धूल मिट्टी आदि रूपों वाली है। इस भूमि के वक्षस्थल में सोना, चांदी, लोहा, तांबा, हीरे, जवाहरात एवं खनिज लवण आदि विद्यमान हैं। ये खनिज लवण पौधों की वृद्धि के लिये आवश्यक होते हैं। यह भूमि सबको धारण करने वाली है। हमें इसका सत्कार करना चाहिये।

पर्यावरण प्रदूषण का वैदिक समाधान

—डा० भारतभूषण विद्यालङ्कार
रीडर, वेद विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

जब हम पर्यावरण की चर्चा करते हैं तो सर्वप्रथम उसके क्षेत्र के बारे में प्रश्न उठता है। यह पर्यावरण है क्या ? क्यों यह अधिक चर्चा का विषय वन गया कि संयुक्त राष्ट्रसंघ से लेकर ग्रामटिकाओं तक इसकी चर्चा होने लगी तथा उसके प्रदूषण के भय से कम्पन प्रारम्भ हो गया।

पर्यावरण—परि+आ+वरण अर्थात् इस सम्पूर्ण दृश्य तथा अदृश्य जगत को सब ओर से आवृत करने वाला। वैसे तो पर्यावरक ब्रह्म ही है, क्योंकि वही एकमात्र ही इस सम्पूर्ण जगत को एक पाद में धारण किये हुए है '(त्रिपाद् ऊर्ध्व दिवि)" । परन्तु यहाँ हमारा विचारणीय ब्रह्म न होकर पृथ्वी को प्रभावित करने वाले प्रकृतितत्व है। इसलिये सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इसके अध्ययन का विषय है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पंचतत्वों से बना है, अतः पञ्चतत्व इसके कारण हैं। "सत्व-रजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः" के अनुसार प्रकृति के तत्वों की साम्यावस्था ही प्रकृति है। और यह प्रकृति जीवजगत का कारण है। परन्तु जब इस साम्यावस्था में वैषम्य उत्पन्न होता है, कोई प्राकृतिक या कृत्रिम व्यवधान इसमें उपस्थित होता है, तो यह जीवनदायिनो प्रकृति जीवन को समाप्त करने का साधन हो जाती है। यह असात्म्य, आकाश में ध्वनि के माध्यम से, वायु में विभिन्न गैसीय तत्वों के उच्चावच होने से, आग्नेय तत्व सूर्यादि से आने वाली किरणों के अल्प या तीव्र अथवा हानिकारक तत्वों के रूप में पृथ्वी तक पहुँचने से, जलों के बहुत बरसने, न बरसने या क्षार, अम्ल इत्यादि से प्रदूषित होकर पृथ्वी पर आने से यह पार्थिव जगत प्रभावित हो जाता है। और यह प्रभाव हमें वनस्पतियों, प्राणियों, रोगों या प्राकृतिक उपद्रवों इत्यादि के रूप में दिखाई देता है। पृथ्वी पर भी यह प्रभाव वातावरण को दूषित करके फैलता है। विविध प्राणी विशेषरूप से मनुष्य इस सन्तुलन को बिगाड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं।

वैदिक परिप्रेक्ष्य में विचार करने पर यह तथ्य स्पष्ट रूप से विदित होता है कि पर्यावरण प्रदूषण तो समस्या है ही नहीं। क्योंकि वेदों को सृष्टि के आरम्भ में मानने पर उस समय पूर्ण व्यवस्थित वातावरण था। उसमें किसी प्रकार का दोष उत्पन्न होने का अवकाश ही नहीं था। सर्वत्र दैवीय पर्यावरण था। वृक्ष, वनस्पतियों, जल, वायु, सूर्य, चन्द्र तथा सभी जीव उस वातावरण में शुद्ध रूप में थे। ऋषियों को प्राप्त यह ज्ञान मनुष्य को सुखसाधन सम्पन्न एवं व्यवस्थित समाज के साथ ही धन-धान्य एवं रोग-शोकादि को दूर करने का उपाय भी बताता है। ऋषियों ने विचार किया और इस दैवीय पर्यावरण को बनाये रखने के लिए साधन के रूप में यज्ञ को चुना।

नवनवेषोन्मुखी प्रज्ञा के धनी उन मन्त्रद्रष्टा ऋषियों ने अनुभव किया कि जीवों द्वारा इस पृथ्वी को मल-मूत्रादि के द्वारा, वायु एवं अन्तरिक्ष को श्वास-प्रश्वास एवं अन्य दुर्गन्धयुक्त क्रियाओं द्वारा, जलों को नाना कारणों से प्रदूषित कर देने से जीवन समाप्त हो जायेगा। अतः इन्होंने सम्पूर्ण जगत में व्यापनशील विष्णुरूप यज्ञ[1] के द्वारा इन सभी देवों को सन्तुष्ट एवं तृप्त करने का उपाय खोज निकाला। यज्ञ से उठता हुआ सुगन्धित धूम्र अन्तरिक्ष से आगे बढ़कर द्युलोक तक पहुँच जाता है। यह धूम्र वायु को शुद्ध करके मेघों के माध्यम से जल को पवित्र कर देता है। शुद्ध जल पृथ्वी के मलों को धोकर स्वच्छ करते हैं और पर्जन्य पिता के बरसने से यह भूमिमाता सस्यशालिनी होकर नाना वृक्षों, वनस्पतियों एवं जीवों को अपने गर्भ से बाहर प्रकट कर देती हैं।[2] यज्ञ के इसी विष्णुरूप की पुराणकारों ने एक भव्य कल्पना की वह विष्णु "त्रिधानिदधेपदम्" तीनों लोकों को नाप लेने वाला है। वह अन्त में जलों में शान्त होकर जल में शयन करने वाला शेषशायी है। विष्णु की इस सर्वव्यापकता को हम पर्यावरण की सर्वव्यापकता कह सकते हैं।

इस यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म कहा गया।[3] दूसरे शब्दों में जीओ और जीने दो का सिद्धान्त जीवन के हर क्षेत्र में लागू करना ही यज्ञ है। "आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत" यह जीवन का सबका अधिकार तभी सुरक्षित

---

१. यज्ञो वै विष्णुः।

२. माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। पर्जन्यपिता स उनः पिपर्तु ॥ अथर्व–१२/१/१२ ॥

३. यज्ञो वै श्रेष्ठतमयकर्म।"

रखा जा सकता हैं जब व्यक्ति देवऋण से उऋण होने का निरन्तर प्रयास करता रहे।—अर्थात् यज्ञ के द्वारा पर्यावरण को सुरक्षित रखना ही श्रेष्ठतम कर्म है। इस प्रकार सम्पूर्ण प्राणियों का जीवनरक्षक होने से यज्ञ को प्रजापति कहा गया है। निघण्टु में यज्ञ के बाचक शब्दों में प्रजापति भी पढ़ा गया है यह प्रजारक्षण तभी सम्भव है जब हानिकारक तत्वों को दूर किया जाता रहे।

यज्ञ के माध्यम से यह कर्म भी सुगमता से होता है। यज्ञ में डाला हुआ पद्धार्थ सूक्ष्मातिसूक्ष्म (माइक्रोफाइन्ड) होकर सब जगह फैल जाता है। जीवन एवं दीप्तिकारक घृत के साथ विभिन्न प्रकार की औषधियां अपने गुणों के द्वारा पर्यावरण को सुगन्धित एवं पवित्र कर देती हैं। "यस्ते गन्धः सृथिवि सम्बभूव यं विभ्रत्योषधयो यमापः"। अर्थव० १२-१-२२। अथर्व० ४-३७ में अजशृङ्गि, गूगल, पीला, नलदी, औक्षगन्धि इत्यादि के द्वारा कृमिनाश की चर्चा है। प्रश्न उठता है कि यज्ञ कीटाणुनाश कैसे करता है। यदि हम किसी कीटाणु को विकसित (कल्चर) करके यज्ञ धूम में रखते हैं तो वह मरता नहीं है यदि उसे D.D.T. या अन्य विषैले द्रव्य में रख देते हैं तो वह समाप्त हो जाता है। परन्तु वह विषद्रव्य वातावरण में फैलकर पर्यावरण को, शरीर में जाकर रोगाणुओं के साथ ही अन्य लाभकारी कीटाणुओं को भी क्षति पहुँचाता है, परिणामतः शरीर दुर्बलता एवं अन्य रोगों से ग्रसित हो जाता है। इसको समझने के लिए हम यदि मलेरिया के रोगाणु को कुनीन में डुबा दें तो वह मर जायेगा परन्तु यदि उसे मलेरिया की आयुर्वेदिक औषधि सुदर्शन चूर्ण के द्रव में डुबा दें तो शायद वह नहीं मरेगा। आयुर्वेदिक औषध शरीर में ऐसा वातावरण, ऐसी परिस्थितियाँ या ऐसी शक्ति उत्पन्न कर देती हैं कि रोगाणु विकसित नहीं हो पाता परिणामतः बिना किसी दोष के रोगाणु समाप्त हो जाते हैं। यही स्थिति यज्ञ कीटाणुओं के बारे में है।

अग्नि द्वारा कृमियों को नष्ट करने के बहुत से प्रमाण हमें वेदों में उपलब्ध होते हैं। "अग्नी रक्षोहामीवचातनः" (अथर्व० १—२८—१) "प्रति दह यातुधानानप्रतिदेव किमीदिनः" (अथर्व० १—२८—२) "प्रत्युष्टंरक्ष प्रत्युष्टा अरातयः निष्टप्ता रक्षः निष्टप्ता अरातयः" (यजु० १-३) अथर्ववेद में तो इस प्रकार के बहुत से सूक्त हमें प्राप्त होते हैं। ये कीटाणु पृथिवी से द्युलोक तक फैले हुए हैं (अथर्व० ४—२०—६) का मन्त्र इसे स्पष्ट कर रहा है।

यज्ञ न केवल पर्यावरण को शुद्ध करता है अपितु वह धन-धान्य एवं पुष्टि भी प्रदान करता है। "यज्ञाद्भवति पर्जन्य प्रर्जन्यादन्नसंभव अन्नाद्

भवन्ति भूतानि" तथा "भूम्याम् देवेभ्योददति यज्ञं हव्यम्रंकृतम् । भूम्याम् मनुष्या जीवन्ति स्वध्यान्नेन मर्त्याः" (अथर्व० १२–१–२२) इस प्रकार यज्ञ इस पर्यावरण को अर्थात् प्रकृति एवं जीवों के क्रमिक नैरन्तर्य को बनाये रखने का साधन बना ।

इस पृथिवीस्थ दोष को सुधारने का महत्वपूर्ण कार्य वृक्ष बड़ी सहजता से करते हैं । वर्तमान कल-कारखानों से निकलने वाले वायवीय प्रदूषण के विष को ये शिव की भांति पी जाते हैं। पत्तियाँ वायु में मिले प्रदूषक पदार्थों के सूक्ष्मकणों को रोक और सोख लेती हैं । उदाहरणार्थ जंगल जलेबी पत्थर के कोयले से उत्पन्न धुएँ की सान्द्रता में २७% को कमी और सल्फरडायाक्साइड की सान्द्रता में ८०% की कमी करने में समर्थ पाया गया। यदि सड़कों एवं मकानों के मध्य दस मीटर चौड़ी एवं ६ मीटर ऊँची हरित पट्टिका का विकास किया जाय तो कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा में ४४% की कमी हो सकती है । भारत सरकार ने इस देश के वातावरण को देखते हुए पर्वतीय क्षेत्रों में ६०% भूमि पर तथा मैदानों में न्यूनतम ३३% भूमि पर वृक्षों की अनिवार्यता घोषित की। परन्तु वर्तमान में यह स्थिति पर्वतों पर २५% तथा मैदानों में १७% मात्र रह गये हैं जबकि प्रदूषण पहले की अपेक्षा लगभग दो गुणा हो गया है । अथर्ववेद कहता है कि "यस्याम् वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा। पृथिवीं विश्वधायसं धृतामच्छा वदामसि" (१२–१–२७) अर्थात् जिस भूमि में वृक्ष एवं वनस्पतियाँ सदा खड़ी रहती हैं वह भूमि विश्व के समस्त जनों का भरण पोषण करने में समर्थ होती है । इसी प्रकार ऊँचे-ऊँचे वर्फ से ढकी चोटियों वाले पर्वत एवं वनों से आच्छादित तलहटियों से युक्त भूमि सबको सुख देती है । "गिरयस्ते पर्वताहिमवन्तारण्यंते पृथिवीस्योनमस्तु" (अथर्व० १२–१–११) भूमि के ऊँचे नीचे तथा समतल सभी क्षेत्र वृक्षों एवं वनस्पतियों से युक्त होने चाहिएँ । "यस्या उद्वत प्रवतः समंबहु । नाना वीर्याओषधीर्याविभर्तिपृथिवी नः प्रथतां शध्यतां नः" (अथर्व० १२–१–२) इसके अतिरिक्त बहुत सी वनस्पतियाँ कीटाणुनाशक भी होती हैं। "वनस्पतिः रक्षः पिशाचाँअपबाधमानः" (अथर्व० १२–३–१५) सरसों, तुलसी, पीपल, जैसे पेड़-पौधे स्पष्ट ही कृमिघ्न हैं। (अथर्व० २–६–१) में तो स्पष्ट रूप से प्रार्थना की गई है कि हे वनस्पति जीवों के इस लोक को उन्नतिशील बनाओ (वनस्पते जीवानां लोकमुन्नयः) ।

यजुर्वेद में "वृक्षाणां पतये नमः" कहकर वृक्षों की रक्षा करने वालों के लिए सत्कार प्रदर्शित किया गया है तो (अथर्व० २–८–५ में) 'नमः

क्षेत्रस्य पतये बीरुत" कहकर नम्र भाव धारण किया गया है। सूक्त के सूक्त वनस्पतियों को समर्पित हैं। अथर्व० ८-७ में इन वनस्पतियों का वर्गीकरण भी किया गया है। आयुर्वेद में रोग निवारण के लिए ली जाने वाली वनस्पति कब, कैसे, किसके द्वारा उखाड़ी जाये इसकी भी चर्चा की गई है जिससे कोई अभद्र पुरुष उस वनस्पति का वंश ही नाश न कर दे। अथर्व० १-३४-१ में भी "मधुनात्वाखनामसि" कहकर इस ओर संकेत किया गया है। ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त वनों के रक्षण के लिए प्रेरणादायी है। इन अरण्यों के बल पर ही यह संस्कृति पल्लवित और पुष्पित होती रही। जिस संस्कृति के मानने वालों की १०० में से लगभग ८० वर्ष की आयु वन में ही व्यतीत होती है उससे अधिक वनों की क्या प्रशंसा की जा सकती है। पीपल, बरगद, तुलसो इत्यादि वृक्षों का पूजन आज भी इस देश में दिखायी देता है।

अग्नि पुराण के अनुसार "यदि कोई व्यक्ति अपने वंश, धन और सुख में वृद्धि की कामना करता है तो वह फल-फूल वाले किसी वृक्ष को न काटे। जो व्यक्ति दस कुँए खुदवाता है उसे एक तालाब खुदवाने का पुण्य मिलता है। दस तालाब खुदवाने वाले को एक झील खुदवाने का पुण्य मिलता हैं। दस झीले खुदवाने वाला व्यक्ति एक देशभक्त उत्पन्न करने का पुण्य प्राप्त करता है। और दस देशभक्त उत्पन्न करने का पुण्य एक वृक्ष लगाने से कम है।" मत्स्य पुराण के अनुसार "एक वृक्ष का आरोपण दस पुत्रों के बराबर है।" वराह पुराण कहता है कि "पंचाम्र वापी नरकं न याति" अर्थात् पांच आम के वृक्ष लगाने वाला कभी नर्क नहीं जाता। पद्म पुराण के अनुसार "जो मनुष्य सड़क के किनारे छायादार वृक्ष लगाता है वह स्वर्ग में उतने ही समय तक सुख भोगता है जितने समय तक वह वृक्ष फलता फूलता रहता है।" इन कथनों के बारे में दार्शनिक रूप से हमारा मत भिन्न तो हो सकता है परन्तु वृक्षों को जो महत्व हमारे पूर्वजों ने दिया था उसमें किसी प्रकार का अनौचित्य नहीं है।

हमारा सारा ही चिकित्साशास्त्र जो आयुर्वेद के नाम से जाना जाता है, औषधियों एवं वनस्पतियों पर निर्भर है। हमने उसके महत्व को देखते हुए उसे "उपवेद के रूप में स्वीकार किया। वनस्पतियों का, उनकी रक्षा का गुणगान भी बहुत हुआ। परन्तु वेदों के प्रादुर्भाव से अब तक लाखों करोड़ों वर्ष का इतिहास हमें उपलब्ध नहीं है। परन्तु बीच-बीच की किन्ही घटनाओं से यह स्पष्ट विदित होता है कि हमने उन चेतावनियों को सुना नहीं, सुना भी तो उसे असली जामा नहीं पहनाया।

हमारे साहित्य में यहाँ तक कि विश्व साहित्य में भी अवर्षण की अनेक घटनायें अंकित हैं। यास्क ने भी निरुक्त द्वितीय अध्याय के तृतीयपाद में

"द्वादश वर्षाणि देवो न बवर्ष" कहा है । हमारे ग्रामों के दादी, नानियों की कहानियों में भी १२ वर्ष तक वर्षा न होना एक सामान्य सी बात हो गई थी। विश्व में अनेक बड़े-बड़े मरुस्थल इस बात के प्रमाण हैं कि मनुष्य जाति ने वनों को, उनके स्वाभाविक रूप को बिगाड़ दिया परिणामतः प्राकृतिक दण्ड हमें मिला। आज भी दिल्ली की ओर बढ़ते रेगिस्तान के कदमों की चेतावनी हमारे वैज्ञानिक देते आ रहे हैं। पर एक दूसरा भी रेगिस्तान फैल रहा है जो हिमालय से उतरकर आ रहा है। पर्वतों से उतरता पानी पेड़ों के कट जाने से भूमि को तोड़ता फोड़ता नदियों की गहराई को कम कर देता है, परिणामतः वह जोवनदायी जल बाढ़ के रूप में मृत्यु को विभिषिका के रूप में हमारे सामने है और प्रतिवर्ष नदियां अपने उदर को चौड़ा करती जा रही हैं। उनमें गांव, शहर, सभ्यता, संस्कृति सब कुछ समाप्त होता जा रहा है। और पीछे रह जाते हैं मुँह चिढ़ाते से रेत की टीले । अथर्व० ६-६१-२ में "इयं शुष्मेभिर्विसखा इवारुजत्सानुगिरीणां तविषेभिरूर्मिमिः पारावतघ्निमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतो माविवासेम धीतिभिः।" इस मन्त्र में सरस्वती नदी द्वारा पहाड़ों की चोटियों को तोड़ने की चर्चा है। जब सरस्वती नदी विनशन् अर्थात कुरुक्षेत्र में समुद्र से मिलकर उस समुद्र को रेत से भर रही थी। उसी भयंकर बाढ़ की स्मृति मनु के जलप्लावन की कथा एवं काल रहा होगा। परन्तु विश्व के विभिन्न द्वीपों महाद्वीपों एवं सभ्यता एवं संस्कृतियों में जाने वाली इस कथा से भी मनुष्य जाति ने कोई सबक नहीं सीखा।

वनों की रक्षा वास्तव में मनुष्य नहीं करता वह तो उसका विनाश एवं उपभोग ही करता है। इसका श्रेय तो वन्य जीवों को ही जाता है। "ग्रेत आरण्याःपशवो मृगा वने हिताः सिंहां व्याघ्रा पुरुषादश्चरन्ति। उलंवृकंपृथिवि दुच्छुनामित ऋक्षीकां रक्षो अपबाधयास्मत।" अथर्व० १२-२-४९ मनुष्यों को खा जाने वाले इन वन्य पशुओं के कारण मनुष्य इन वनों से दूर ही रहते हैं परिणामस्वरूप वन अपने स्वाभाविक रूप में विकसित होते हैं। एक विचारधारा के अनुसार राजस्थान के रेगिस्तान बनने का कारण यह बताया जाता है कि वहाँ के मनुष्यों ने पराक्रम प्रदर्शन के लिए वन्य पशुओं का विशेषतः शेर चीतों का वध कर दिया, उससे हरिण आदि वनस्पतियों पर जीवित रहने वाले जीवों की संख्या बढ़ी तब वन विकास रुक गया। उन पशुओं के भी न रहने पर पेड़ों के पत्ते गिरने से ऊपर से गिरने वाला बीज भूमि तक नहीं पहुंच सका और नये पेड़ नहीं उग सकें। हरिद्वार से उत्तर में स्थित रायवाला के जंगलों के वन्य पशुओं के मार दिये जाने से वहाँ के साल वन में नये पौधे नहीं उग रहे हैं। क्योंकि साल का बीज

१० दिन तक यदि भूमि तक नहीं पहुंचेगा तो उसकी अंकुरणक्षमता समाप्त हो जाती है। पत्तों के गिर जाने एवं उसकी तह बन जाने से यह प्रक्रिया रुक गई।

जीवन तो वस्तुतः है ही जीव और वन। वृक्ष भूमि पर नमी बनाकर बादलों को बरसने के लिए प्रेरित करते हैं, और जड़ों के माध्यम से जल को भूमि में ले जाकर (वाटर लेवल) जलस्तर को बनाये रखते हैं । और भूमि के अपरदन को रोकते हैं। भूमि के जिस स्तर को बनाने में प्रकृति को हजारों वर्ष लगते हैं' पेड़ न होने पर वह कुछ मिनट में ही नष्ट हो सकता है। तब जीवन अर्थात् जल को प्रवाहित करने वाली ये नदियां मातृत्व छोड़कर विनाशकारी रुद्र रूप धारण कर लेती हैं।

अथर्व वेद के एक मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि "यत् ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपिरोहतु। माते मर्म विमृग्बरी माते हृदयमर्पिवम्।" (अथर्व० १२–२–३५) हे भूमि माता मैं जो तुम्हें हानि पहुंचाता हूँ शीघ्र ही वह क्षतिपूर्ति हो जावे, हम अत्यधिक गहराई तक (कोयला इत्यादि) खोदने में सावधानी रखें क्योंकि यह पृथिवी अन्वेषण योग्य है उसे व्यर्थ खोदकर उसकी रोहण शक्ति को नष्ट न करें । उसे व्यर्थ न खोदें, अन्यथा अपरदन का भय बना रहेगा । इसलिए ब्रह्मोपनिषद् में कहा गया है कि "रक्षया प्रकृति पातु लोका:"।

प्रकृति में पृथिवी की अपेक्षा जल की मात्रा कई गुनी है । परन्तु वह खारा जल किसी काम नहीं आ सकता । जल का एक नाम ही जीवन है पर यह जीवनदायी जल आज विषैला हो गया है। जो दैवीय जल आकाश से बरसता है उसका भी हम केवल ४% ही उपयोग कर पाते हैं शेष सब हमारा ही विनाश करता हुआ समुद्र में जा मिलता है । हमारा वातावरण स्वच्छ होगा तभी ऊपर से बरसने वाले जल भी स्वच्छ होंगे। वेद कहता है "यासां देवादिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे वहुधा भवन्ति । या अग्नि गर्भदाधरे सुवर्णास्तान आपःशं स्योनाभवन्तु" (अथर्व० १–३३–३)। द्यु एवं विद्युत अन्तरिक्ष में मेघों के रूप में रहने वाले जल, जो कि विद्युत को अपने गर्भ में धारण करते हैं वे उत्तम वर्ण या स्वर्ण के समान तेजयुक्त जल, हमारे लिए सुखदायक हों।

वेदों में विशेषतः अथर्व० में जलचिकित्सा की भी बहुत चर्चा है "अप्सु भेषजम्" "अपो यायामि भेषजम्" 'अन्तर्विश्वानि भेषजः' 'जलापभेषजः,

इत्यादि बहुत से वाक्य उपलब्ध होते हैं। हमारे तथा हमारे पशुओं के लिए शुद्ध जल उपलब्ध हो। यह जल की शुद्धता भी हमें उसके प्रदूषित होने से रोके जाने का उपदेश देती है।

सूर्य से तो रोगनाश एवं कीटाणुनाश दोनों की प्रार्थना की गई है "सूर्यकृणोतु भेषजम्" (अथर्व० ६–८३–१) हमारे घर ऐसे हों जहाँ धूप खुलकर आती हो "तावां वास्तून्युरमसिगमध्यै यत्र गावो भूरि शृंगा अयासः"। ऋग्० १–१५४–५" पोलिया जैसे रोगों की तो यह अचूक औषध है। 'अनुसूर्यमुदषतांमहृद्योतो हरिमा-चते। गो रोहितस्य वर्णेन तेनत्वा परिदध्मसि" (अथर्व० १–२२–१) आदि। अग्नि से भी अनेक स्थानों पर कीटाणु नाश को कहा गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि पञ्चतत्वों के प्रदूषण से उत्पन्न होने वाले रोग और उनके कारणों को दूर करने की प्राथना की गई है। इन सबमें द्युलोक की चर्चा तो है पर कहीं भी ध्वनि या उससे सम्बन्धित रोगशोकादि की चर्चा नहीं हैं।

प्रसिद्ध शान्ति पाठ तथा बहुत से मन्त्रों में पर्यावरण के अन्तर्गत आने वाले पदार्थों से शान्ति को कामना की गई है। "शान्ताद्यौशान्ता पृथिवो शान्तमिदमुर्वन्तरिक्षं। शान्ता उदन्वतोरापः शान्तानः सन्त्वोषधीः" अथर्व० १९–९–१। अन्यत्र प्रार्थना को गई है कि "य रेव ससृजेघोरं तैरेव शान्तिरस्तुनः" अथर्व० १–९९–५। यह वास्तव में पर्यावरण प्रदूषण रोकने का मूल मन्त्र है।

अन्त में यह स्पष्ट कर देना बहुत जरूरी है कि प्रदूषण के लिए प्रायः जनसंख्या को उत्तरदायी माना जाता है कि बढ़ती जनसंख्या के लिए औद्योगीकरण बढ़ता है, उससे प्रदूषण बढ़ता है। किन्तु अनेक तथाकथित विकसित, पर कम जनसंख्या वाले देशों में प्रदूषण अधिक है। उसका कारण है प्रतिव्यक्ति की आवश्यकता का अधिक होना, तृष्णा एवं भोगवादी संस्कृति। अतः हमारे ऋषियों ने अपरिग्रह को तथा त्याग को वरीयता दी।

पूर्व प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी ने कहा था कि यह बड़े खेद की बात है कि "सभी देशों में उन्नति का अर्थ प्रकृति पर आक्रमण समझा जाने लगा है............जरूरत इस बात की है कि रहन-सहन का स्तर भी सुधरे और लोगों को जो कुछ भी विरासत में मिला है उसमें कोई फर्क न आये और न प्रकृति के सौन्दर्य, ताजगी और स्वच्छता में। जो हमारे जीवन के लिए बहुत जरुरी हैं, कोई कमी आये।

—इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः। अथर्व० १८–२–२१॥

———

ऊर्जा संसाधनों की खोज

— एच० सी० ग्रोवर

इतिहास गवाह है कि प्रारम्भ में पशु और लकड़ी हमारी ऊर्जा के आधार थे और लकड़ी के स्थान पर कोयला, कोयले की जगह तेल और गैस को लेने में आधी शती के लगभग समय लगा। लेकिन वर्तमान में प्रचलित ऊर्जा का स्थान अन्य स्रोत शीघ्र ही लेंगे ऐसी आशा की जाती है। ऐसा नहीं हो पाया तो समूचा विश्व संकटग्रस्त हो जायेगा।

प्रारम्भ में लकड़ी से कोयला और तेल तथा गैस के जब बदलाव हुए थे तब परिस्थितियाँ अनुकूल थीं। तात्पर्य यह कि आर्थिक संवृद्धि की गति तेज थी और ऊर्जा के नए स्रोतों की उत्पादन लागत भी कम आ रही थी। पर अब जो प्रणालियाँ अपनायी जाएँगी, वे काफी महँगी पड़ेंगी।

बढ़ती जरूरतें और घटते संसाधन—

पृथ्वी के लगभग ५०० करोड़ लोग लगभग १०,०००,०००,०००,००० वाट (१० टेरावाट) अथवा १०^{12} वाट ऊर्जा का प्रयोग करते हैं। ऊर्जा की वर्तमान खपत २.२ किलोवाट घण्टा प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति है पर सारी दुनियाँ में यह दर समान नहीं है।

हमारी वर्तमान आवश्यकताएँ और भविष्य का आंकलन—

१. जीवाश्म ईंधन (Fossil Fuel)—

जीवाश्म ईंधन के मुख्य चार स्रोत हैं— कोयला, तेल, प्राकृतिक गैस, तेल शिलाएँ तथा डामर बालू। अब तक सारा विश्व लगभग १३० गिगाटन (१३०×१०^९ टन) कोयला प्रयुक्त कर चुका है। एक वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार सारी दुनियाँ में खानों से निकाला जा सकने वाला ज्ञात कोयला लगभग ६०० गिगाटन (६००×१०^9 टन) है जो अब तक प्रयोग किए जा चुके कोयले का लगभग ४ गुना है। हम प्रतिवर्ष (विश्व भरमें) २.६ गिगाटन (२.६×१०^9 टन) कोयला इस्तेमाल करते हैं।

आसानी से ढोए जा सकने के कारण तेल अत्यन्त उपयोगी जीवाश्म ईंधन है। हम प्रतिवर्ष ३ गिगाटन (३ × १०⁹ टन; तेल काम में ला रहे हैं। विश्व में तेल के प्रमाणित भण्डार लगभग ८८.४ गिगाटन (८८.४ × १०⁹ टन) के बराबर हैं। हम प्रतिवर्ष ५ गिगाटन (५ × १०⁹ टन) की दर से नये भण्डारों का पता लगा रहे हैं। एक अनुमान के अनुसार ३०० गिगाटन (३०० × १०⁹ टन) तेल प्राप्त किया जा सकता है।

तेल की अपेक्षा प्राकृतिक गैस की अधिक लम्बे समय तक चलने की सम्भावना है। अब तक हम गैस के ज्ञात भण्डारों का ४० प्रतिशत उपयोग में ला चुके हैं।

२. नाभिकीय ऊर्जा (Nuclear Energy)

जब द्रव्य को ऊर्जा में बदला जाता है तो नाभिकीय ऊर्जा उत्पन्न होती है। दो छोटे नाभिकों को आपस में संगलित करके भारी नाभिक का निर्माण करके (Nuclear fusion) ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

यह जटिल प्रक्रियाएँ रिएक्टरों में की जाती हैं। वर्तमान में तीन तरह के रिएक्टर ज्ञात हैं।

पहले ताप रिएक्टर का परीक्षण शिकागो विश्वविद्यालय में १९४२ में किया गया था। तब से आज तक २०० से अधिक ताप रिएक्टर स्थापित किए जा चुके हैं जिनकी कुल उत्पादनक्षमता लगभग १२०,००० मैगावाट (१२०,००० × १०⁶ वाट) है जो विश्व के विद्युत उत्पादन का ६% है।

प्रजनक रिएक्टरों का अभी विकास होना है। परीक्षण के तौर पर ऐसे कई रिएक्टर चलाए जा रहे हैं पर व्यावसायिक स्तर पर किसी से भी बिजली नही पैदा की जा रही है।

संग्लन रिएक्टर हाइड्रोजनों के दो समस्थानिकों—ड्यूटोरियम और ट्रीटियम के आपसी संग्लन (fusion) से चलेंगे जिनमें हीलियम का भारी नाभिक बनता है और ऊर्जा विमुक्त होती है। इन ईंधनों का कोई संकट नहीं है क्योंकि सागरों के जल से भारी मात्रा में प्राप्त ड्यूटीरियम तथा लीथियम को संग्लन रिएक्टरों में ही न्यूट्रान कणों की बौछार से ट्रीटियम प्राप्त किया जा सकता है। यह रिएक्टर हाइड्रोजन बम की प्रक्रिया जैसा है।

३: भू-तापीय ऊर्जा (Geothermal Energy)

भू–उष्मा का उपयोग सैकड़ों वर्षों से किया जा रहा है। आज लगभग २० भू–तापीय विद्युत संयत्र चलाए जा रहे हैं जिनकी क्षमता कुछ मेगावाट (१०⁶ वाट) से लेकर

५०० मेगावाट (५०० $\times$ १०^{6} वाट) तक है और वे अब कुल मिलाकर लगभग १.५ गिगा-वाट (१.५ $\times$ १०^{9} वाट) ऊर्जा उत्पन्न करने हैं। भू–तापीय ऊर्जा का उपयोग केवल वहीं सम्भव है जहाँ यह धरती की सतह के काफी निकट उपलब्ध हो। ज्वालामुखी अथवा प्रायः भूकम्प आने वाले क्षेत्रों में यह अधिक होती है।

४. ज्वार शक्ति (Tidal Power)

यह शक्ति संसार के ज्वारों में लगभग ३ टेरावाट (३ $\times$ १०^{12} वाट) है। तथापि संसार के कुछ ही स्थानों में इस ऊर्जा को हासिल करना सस्ता है। ये वही स्थान हो सकते हैं जहाँ उच्च ज्वार उठते हैं।

५. वायु शक्ति (Wind Energy)

पृथ्वी पर बहने वाली वायु में लगभग २७०० टेरावाट (२७०० $\times$ १०^{12} वाट) ऊर्जा होती है। वायु ऊर्जा छोटे पैमाने पर स्थानीय आवश्यकताओं के लिए उपयोगी होती है किन्तु उसके योगदान को महत्त्वपूर्ण बनाने के लिए १०० किलोवाट (१०० $\times$ १०^{3} वाट) और कई मेगावाट (१०^{6} वाट) के बीच के यन्त्रों का विकास करना पड़ेगा। ऐसे यन्त्रों का अभी परीक्षण किया जा रहा है।

वायुनिहित २७०० टेरावाट (२७०० $\times$ १०^{12} वाट) शक्ति में से केवल एक चौथाई शक्ति ही धरातल के ऊपर प्रथम १०० मीटर में उपलब्ध है। केवल भू-क्षेत्रों तथा अपरिहार्य क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए यदि सभी महाद्वीपों में सब जगह वायु संयत्र बनाए जाएँ तो अधिक से अधिक ४० टेरावाट (४० १०^{12} वाट) ऊर्जा उपलब्ध होगी।

यद्यपि सौर ऊर्जा बहुत विसरित होती है फिर भी यह बहुत उपयोगी है। इसका उपयोग घरेलु कामों, फसल सुखाने, वातानुकूलन स्थान, तापन, पानी निकालने, विलवणी-करण (De-solination) के लिए और उच्च तापमान तथा विद्युत दोनों के उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

निष्कर्ष—

हम यही कह सकते हैं कि आने वाले दशकों या नई शती में कोई ऐसा शक्तिस्रोत नहीं ढूँढा जा सकता जो ऊर्जा समस्या का सफल निदान प्रस्तुत कर सके। अतः ऊर्जा की समस्या का निपटान हमें ऊर्जा के सभी ज्ञात-अज्ञात स्रोतों से करना होगा जो प्रौद्योगिकियाँ विकसित की जा चुकी हैं वे तो हमारे इस्तेमाल में आएँगी ही, साथ ही नए स्रोतों की ओर भी हमें मुखातिब होना पड़ेगा जो त्राण का मार्ग सुझा सकें। ऊर्जा संकट जैसी चुनौती को समय रहते स्वीकारना होगा। विलम्ब करना हमारे लिए घातक ही होगा।

वृक्ष-माहात्म्य

डा० निगम शर्मा

जीवन के लिए वृक्ष बहुत उपयोगी हैं, अतः इन्हें वृक्ष (वरण के योग्य) कहा गया है। 'महीरुह' भी वृक्ष के लिए कहा गया अर्थात् इन्हें स्वच्छन्द रूप में पृथ्वी पर बढ़ने-रोहण करने के लिए उपयुक्त वातावरण दिया जाय। वन(जल) के पालक-रक्षक होने से वृक्ष (विशेष) को वनस्पति कहते हैं। नाना प्रकार से शाखा-प्रतान में ये फैलते हैं अतः इन्हें 'शाखी' कहा गया है। हमारे ऋषियों को यह पता था कि कुछ वृक्ष मांस खाते हैं अतः ऐसे वृक्ष पलाश (पल मांस, आश=खाने वाले) कहलाते हैं। पैर से पानी पीने के कारण वृक्ष को पादप कहा जाता है। विट (धूर्त, जुवारी) लोग जहाँ पर पान (मदिरा) करते, समाज-उत्सव करते हैं, ऐसे वृक्ष विटप (विटों की पान-भूमि) कहलाते हैं। नौका-जलयान आदि में प्रमुख साधन होने से वृक्ष को तरु कहा गया है (तरन्त्यनेन)। पक्षी यहां पर आकर कोलाहल करते हैं अतः इन्हें कुट (कौति पक्ष्यत्र); वायु के द्वारा वृक्ष स्पन्दन करते हैं अतः इन्हें साल (सलति वायुना); द्रवित होने से वृक्ष को द्रु या द्रुम बोलते हैं। ओष= दीप्ति जिसमें रहे, उसे औषधि कहते हैं (ओषोऽत्र धीयेते)। 'औषधिः फलपाकान्ता' कहकर वताया गया है कि पाकान्त होने पर औषधि सूख जाती है। अनः= शकट (छकड़ा, रथ, यान) के वेग को रोक देने से वृक्ष अनोकह कहलाता है। वृक्ष को दारु भी कहते हैं क्योंकि आरा से चिकना विदारण करके किवाड़ आदि के काम आता है। नाना प्रकार से औष-धियों में काम आने के कारण कुछ विष-वृक्ष भी होते हैं।

पुराने समय में वृक्षप्रेमी लोग अनेक प्रकार से वृक्ष लगाते थे। एक लाख आम के वन को लक्षाराम (लखाराव) कहा जाता था। इसी भांति कदली, खदिर, बदर, प्लक्ष, वट, पीपल, शिरीष, निम्न, नींबू, केतकी आदि के वन लगाये जाते थे। इस प्रकार पुष्प-समृद्धि से युक्त कानन में उसी प्रकार का मधु, मधुमक्खियों द्वारा सम्पन्न होता था। नीम का मधु, आम की मंजरियों के मकरन्द से बना मधु, गुलाब, कमलपुष्प, केवड़ा आदि के काननों में निष्पन्न मधु अनेक औशधियों में लाभप्रद उपचार है। कुछ ऐसे वृक्ष होते हैं जिनके अपक्व फल भी अचार, आसुत, औषधियों में काम आते हैं। ऐसे वृक्षों को 'शलादु' कहा गया है। सूखे फल भी (द्राक्षा, मुनक्का, अनार, छुआरा, पिंडखजूर, नारियल) जिनके काम में आवे ऐसे वृक्ष को 'वान' कहा जाता है।

प्रकाशक होने से वृक्ष का नाम काष्ठ, काष्ठा है। क्योंकि अपने नीले गहरे प्रकाश के कारण ही ये वृक्ष पहचाने जाते हैं (काष्ठं काशतेः)। लताओं में भी ज्योतिष्मती लताओं का वर्णन आता है। लक्ष्मण को नीरोग करने के लिए विशल्यकरणी, सावर्ण्यकरणी, संजीवनी लतायें लायीं गयी थी जो ज्योति–पुञ्ज थीं। कहा जाता है कि ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों में अब भी ऐसी ज्योति बिखेरने वाली औषधियाँ तथा लतायें हैं। वृक्ष की लकड़ियों के लिए अब भी ईंधन (दीप्ती) अथवा एथ कहा जाता है। समिधा का भी यही अभिप्राय है कि जिनमें से चमक निकले। ऐसी औषधियों का वर्णन कुमारसम्भव में श्री कालिदास ने भी किया है—

वनेचराणां वनितासखानां ।
दरीगृहोत्संगनिषक्त भासः ।
भवन्ति यत्रौषधयो रजन्या—
मतैलपूराः सुरत—प्रदीपाः ।। १–१०

सूर्य का तेज औषधियों में सदा विद्यमान रहता है जो रात्रि के समय उजागर होता है। कुछ औषधियों-पुष्पों के पराग अधिक उन्मादक होते हैं, अतः 'मकरन्द' (मकरमपि द्यति) अर्थात् मगर को भी जो उत्तेजित करता है। पुराने समय में इस प्रकार के भी वन लगाये जाते थे जहाँ से हर समय सुगन्धि फूटती रहती थी। मधु-वन, वृन्दावन, द्वैत-वन, प्रमद-वन आदि।

लकड़ी, किवाड़, सजावट, चौकी, तेल, चटाई, पंखे, खिलौने और सौन्दर्य प्रसाधन में भी वृक्षों का महान् योगदान रहा है। जब-जब वृक्ष बहुत पुराने पड़ जाते थे, पत्तियां कम रह जाती थीं, नाना प्रकार से रन्ध्र हो जाने से पक्षियों के कोटर बन जाते थे ऐसे जंगलों को कटवा दिया जाता था। कठोरता, दृढ़ता तथा किवाड़ आदि के लिए ऐसी लकड़ियाँ बहुत उपयोगी होती थीं और ऐसे वन 'कोटरावन' कहलाते थे। पुनः इन पर कृषि होने लगती थी तथा अन्य स्थानों पर इसी प्रकार पुनः वृक्षारोपण कानन के रूप में बना दिये जाते थे। कानन का अर्थ ही है जहाँ सुख से, जल से (केन सुखेन जलेन वाऽननं जीवनं प्राणनं यत्र) आनन्द प्राप्त हो। कानन वास्तव में आनन्द का दर्पण (क का आनन) होता था।

वन, उपवन, कानन, आम्र–वण, बदरी वण, केतकी वन आदि अवसर तथा आवश्यकता के अनुरूप बनाये, सजाये जाते थे। जहाँ भगवान् की रमणीय चर्चा, व्याख्या हो, उन्हें अरण्य (शस्य = भगवतः, रण्यं–रमणीयं कथनं यत्र) कहा जाता है। भारत की संस्कृति को तो एक प्रकार से अरण्य-संस्कृति ही कहा गया है। संसार का जीवन उद्विग्न करने वाला है, पर अरण्य में आत्म-शान्ति का चिररमणीय लाभ मिलता है। पुराने सभी राजा जीवन का परम और चरम आनन्द वन में ही पाते थे। अनेक प्रकार के आध्यात्म

ग्रन्थों की रचना, आरण्यक नाम से सूचित करती है कि पुराने लोगों को अरण्य-जीवन कितना प्रिय और प्रशंसित था।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण में नाना प्रकार के पौधों, लताओं और वृक्षों के बारे में आहार–विहार-मनोरंजन आदि विषयों का विवरण दिया गया है। ऋषियों ने वृक्षों के प्रति अपने प्यार को आत्मसात् कराया। लता को शकुन्तला भगिनी कहकर पुकारती है। स्वयं घड़े से सींचती है और लतायें भी उसके विरह में पत्रों के रूप में अश्रुपात करती हैं। वृक्ष आशीर्वाद देते हैं और नाना प्रकार के राजोचित वस्त्रों से तथा आभूषणों से अपना अभिनन्दन पहुँचाते हैं। कण्व ऋषि के समान ही शरभंग ऋषि वृक्षों के प्रति बहुत ही वात्सल्य रखते थे। उन्होंने मंत्र–पवित्र अपने शरीर से अग्नि की पूजा की और अब ये वृक्ष ही उनके आश्रम में अभ्यागत ऋषि-मुनियों की पुत्रों की भांति सेवा-उपचार करते थे।

छाया विनीताध्वपरिश्रमेषु
भूयिष्ठसम्भाव्य फलेष्वमीषु।
तस्यातिथीनामधुना सपर्या–
स्थिता सुपुत्रेष्विव पादपेषु ॥ रघु० १३–४६

सिंह राजा दिलीप से कहता है – यह सामने जो देवदारु का तरु देखते हो, इसको साक्षात् शिवजी ने अपना पुत्र ही समझा है। स्कन्द की माता गौरी ने स्वयं अपने स्तन-घट से इसे पयःपान कराया और पाला–पोसा है—

अमुं पुरः पश्यसि देवदारुं
पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन।
यो हेमकुम्भ स्तन निःसृतानां
स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः ॥ रघु० २–३६

महाकवि वाण ने तपस्विनी महाश्वेता के तप का प्रभाव दिखाया है कि अभ्यागत चन्द्रापीड के लिये वृक्षों के नीचे से धूम आयी कि फलों से उसका कमण्डलू भर गया।

मेघदूत में वताया गया है कि यक्ष लोग वृक्षों को बहुत प्यार करते थे फलतः सभी ऋतुओं के वृक्ष सदा ही पुष्पित और फलेग्रहि रहते थे।

पुराने समय में देश सम्पन्न और श्री–सम्पदा से प्रसन्न था। लोग बड़े-बड़े विशाल कृत्रिम सरोवरों में पद्म-वन, कुमुद-वन तैयार कराते थे। पुष्प-सागर से पुष्प लहराते तथा मन को पुलकित और निरुपद्रव करते थे। तीव्र घात करने वाली जल-बेला के वेग रोकने के लिए ताल-वन राष्ट्र की ओर से लगाया जाता था। यह प्रक्रिया आज भी आनन्द का सम्वर्धन दे सकती है।

अनिर्णीत स्वरूप

डा० जगदीशप्रसाद, मेरठ कालिज, मेरठ-250 002

शून्य की संतान—किसी परिमित (finite) राशि को किसी परिमित राशि से भाग देने पर जो भागफल प्राप्त होता है, वह एक परिमित राशि ही होता है। किसी परिमित राशि को शून्य (zero) से भाग देने पर प्राप्त भागफल क्या होगा? इसे अनन्त (infinity) की संज्ञा दी गई है। अर्थात् अनन्त का जन्म शून्य से होता है। शून्य को शून्य से भाग देने पर क्या प्राप्त होगा? इसी (0/0) का नाम है अनिर्णीत स्वरूप (Indeterminate form); क्योंकि 0/0 का मान आज तक कोई गणितज्ञ ज्ञात नहीं कर पाया है। इस प्रकार, अनंत और अनिर्णीत स्वरूप दोनों का जनक शून्य है। अतः अनिर्णीत स्वरूप के विवेचन के पूर्व, शून्य की कल्पना और इसकी प्रकृति पर विचार करना उचित होगा, जिससे कि सन्तान की प्रवृत्ति (गुण) जानने के पूर्व इसके पिता का इतिहास पता रहे, क्योंकि "तुख्म तासीर सोहबत का असर।"

शून्य की कल्पना—प्राचीनकाल से ही गणितज्ञों ने शून्य के दो रूपों की अवधारणा की है। अंकगणित के शून्य को हम 'कुछ नहीं, (nil) कह सकते हैं; और बीजगणित के शून्य को हम 'परमाल्प राशि' (infinitesimally small number) मान सकते हैं। बीजगणित के अस्तित्व में आने के बहुत पहले अंकगणित का विकास हुआ। अतः अंकगणित बीजगणित का अग्रज है। अंकगणित में शून्य अभाव या कुछ नहीं वाली अवधारणा के कारण ही, गणित के प्रारम्भिककाल में, शून्य के प्रतीक (चिन्ह) बिंदु (point or dot) को घटाने के परिकर्म (subtraction) के रूप में प्रयुक्त किया जाता रहा। बाद में, घटाने के परिकर्म के लिए "+" चिन्ह (जो आज जोड़ने के परिकर्म के लिए प्रयुक्त होता है) और अन्ततोगत्वा "—" चिन्ह को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। उधर शून्य भी अपने शैशवकाल के बिंदु से वृत्त, वृत्ताकार चिन्ह तथा अंडाकार चिन्ह के विकासक्रम से गुजरता हुआ, वर्तमानकाल के यौवन की आकर्षक एवं उत्कर्ष अवस्था में आज हमारे सामने है।

बीजगणित के शून्य की परमाल्प राशि के रूप में अवधारणा ० × अ = ० = अ × ० सिद्धान्त कर आधृत है। इसे इस प्रकार समझाया जा सकता है: उपर्युक्त समीकरण में जैसे-जैसे गुण्य कम किया जाएगा, वैसे-वैसे गुणनफल भी कम होता जाएगा। यदि गुण्य को परमाल्प कर दिया जाए, तो गुणनफल भी परमाल्प हो जाएगा। परन्तु

परमाल्प होने का अर्थ शून्य होता है। अतः यदि गुण्य शून्य हो, तो गुणनफल भी शून्य होगा। इसी प्रकार जैसे-जैसे गुणक कम किया जाएगा, वैसे-वैसे गुणनफल भी कम होता जाएगा; और गुणक के शून्य होने पर, गुणनफल भी शून्य हो जाएगा। इस अवतरण में शून्य को अवरोही (descending or decreasing) राशि के रूप में कल्पित किया गया है।

शून्य की इन दोनों कल्पनाओं को स्पष्ट करने के लिए हम स्थूल उदाहरण लेते हैं। मानलो मेरे पास दो पुस्तकें हैं। मैंने इन दोनों पुस्तकों को आपको दे दिया। मेरे पास कितनी पुस्तकें शेष बचीं? उत्तर स्पष्ट है—कुछ नहीं (nil), अर्थात् अभाव या शून्य, क्योंकि मेरे पास पुस्तक का अभाव हो गया है, मेरे पास कोई भी पुस्तक नहीं बची है। पुनः शून्य की परिभाषा हम इस प्रकार करते हैं कि यह छोटी-से-छोटी वह राशि है जिसकी हम केवल कल्पना कर सकते हैं (zero is a number as small as one can think of)। इस प्रकार, 'शून्य', 'कुछ नहीं' की तुलना में, बहुत बड़ी राशि है, यद्यपि 'शून्य' 'कुछ नहीं' के अत्यन्त समीप है। अपने कथन को स्पष्ट करने के लिए हम उदाहरण लेते हैं। सोडियम के स्पेक्ट्रम (doublet) में दो लाइनें होती हैं, जिनकी तरंगदैर्घ्य ५८९० तथा ५८९६A^0 होती हैं, जबकि $1\ A^0 = 10^{-10}$ मीटर। इनके बीच $6\ A^0$ की दूरी (अन्तर) होता है। साधारणतः वायु में प्रकाश का वेग एक लाख छियासी हजार मील या 3×10^9 मीटर प्रति सैकिंड होता है। अब, यदि यह प्रश्न किया जाए कि उपर्युक्त डबलेट के बीच की दूरी को तय (संचरण) करने के लिए कितने प्रकाश-वर्ष (Light years) लगेंगे, जबकि एक प्रकाश-वर्ष $= 1 \times 10^{17}$ मीटर? यद्यपि गणित की दृष्टि से इस समय को परिकलन द्वारा ज्ञात किया जा सकता है, तथापि व्यावहारिक दृष्टि से समय का यह मान इतना छोटा है कि हम उसे उपेक्षणीय, नगण्य या शून्य कह देंगे। इसी प्रकार $3\ A^0$ के लिए लगने वाला समय $6\ A^0$ वाले सयय से भी कम, अतः शून्य है। इन दो उदाहरणों पर विचार करें। जब $6\ A^0$ वाले समय को शून्य कहा, तब उसका अर्थ समय का अभाव (nil) नहीं है, क्योंकि $3\ A^0$ वाले समय को भी शून्य कहा है, जबकि $6\ A^0$ वाला समय $3\ A^0$ वाले समय से निश्चित रूप से दुगना है। अतः शून्य की परिभाषा में 'छोटी-से-छोटी राशि' कहा गया है—सबसे छोटी राशि' (smallest number) नहीं कहा है। इसी प्रकार $2\ A^0$ तथा $1\ A^0$ आदि के लिए लगने वाले समयों के मान और भी कम होंगे और वे सभी शून्य कहलाएँगे। इसी प्रकार के और अनेक उदाहरणों से निष्कर्ष निकलता है कि शून्य' 'अभाव' या 'कुछ नहीं' (nil) से बड़ी संख्या है। अर्थात् शून्य', कुछ नहीं' के निकटतम होते हुए भी शून्य कभी भी 'कुछ नहीं' नहीं हो सकता। इस प्रकार, शून्य केवल सैद्धान्तिक (theoretical) महत्त्व की संख्या है, व्यावहारिक दृष्टि से (practically) किसी भी राशि का मान 'कुछ नहीं' की कोटि का शून्य नहीं है। वस्तुतः,

शून्य वह सीमा है जिस पर किसी राशि के पहुँचने की आशा की जा सकती है; किंतु शून्य 'कुछ नहीं' के कभी भी बराबर नहीं हो सकता (The quantity zero is only the limit to which a small quantity may be expected to tend, but zero is not any time equal to nil । यहाँ पर आप बौद्धधर्म के शून्यवाद से प्रस्तुत शून्य की तुलना न करें, क्योंकि उसकी कल्पना का आधार कुछ और है।

इस संदर्भ में, अपने मूल विषय से तनिक हटकर, एक बात का उल्लेख करदूँ। गणित में हम शताब्दियों से x—x = o का प्रयोग करते आ रहे हैं। मुझे यह कहते हुए तनिक संकोच या झिझक हो रही है कि यह धारणा त्रुटिपूर्ण है। गणित के विषय में जो वाक्य प्रयुक्त होता है उससे हम सभी, गणित के अध्येता के नाते, परिचित होंगे, ऐसी आशा है। वह वाक्य है, "गणित सबसे अधिक यथातथ विज्ञान है" (Mathematics is the most exact science)। आपकी भावनाओं को तनिक ठेस पहुँचाने का मैं दुस्साहस करूँगा यदि यह कहूँ कि यह वाक्य गणित के किसी चाटुकार 'भाट' ने प्रयोग किया होगा, जो गणित के ज्ञान से कोसों दूर रहता होगा, क्योंकि यह वाक्य अतिशयोक्तिपूर्ण है—अशुद्ध है, गलत है। इस द्विधापूर्ण स्थिति में मैं कुछ साहस बटोरकर यदि इस वाक्य को इन शब्दों में शुद्ध करने का प्रयास करूँ कि, "गणित अनुमानाश्रित विज्ञान है" (Mathematics is a Science of approximation), तो हम वास्तविकता (सत्य) के कुछ समीप पहुँच सकेंगे। आप चौंकें नहीं, गंभीरता से विचार करें। तथ्य यह है, जैसा कि मैंने अभी कहा है, शून्य एक सीमामात्र है जिसे कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सकता। इस सब के बावजूद, व्यवहार में हमें शून्य को ऐसी छोटी राशि मानकर चलना पड़ता है जिसका मान शून्य होता है।

क्योंकि शून्य की परिभाषा में कोई परिबद्धता (दृढ़ता नहीं है—उसे बंधनों की सीमा में परिबद्ध करके सुरक्षित नहीं किया गया है, विजातीय तत्वों के आवागमन के लिए शून्य की विस्तृत सीमाओं को खुला छोड़ दिया गया है, ऐसी अवस्था में यह कहना त्रुटिपूर्ण न होगा कि शून्य एक निश्चित स्थिरांक (definite constant) नहीं है। उदाहरणार्थ 'मानलो' कि किसी अवस्था में राशि 0 001 को शून्य मान लिया गया है स्मरण रहे कि मैंने 'मानलो' शब्द को जानबूझकर प्रयोग किया है, क्योंकि, जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, कोई राशि कितनी भी छोटी हो जाए किंतु उसका मान शून्य नहीं हो सकता। अब, 0 001 से कम वाली 0 0009, 0 0002 तथा 0.CC01 आदि सभी राशियों के मान शून्य होंगे। इससे सिद्ध होता है कि शून्य एक निश्चित अचर राशि (स्थिरांक) नहीं है, बल्कि इसका मान शून्य से शून्य के अंतराल (range or limits) के मध्य बदलता रहता है। इससे आप शून्य को साँख्यिकीय चरों

(Statistical variables) आदि के साथ घालमेल (confuse) न करें, क्योंकि शून्य का विचरण (variation) भी शून्य कोटि (order) का ही है। "The random variable is a numerical valued variable defined on a sample space and a sample space is the picture of all the possible outcomes of an experiment.")

अनंत की परिकल्पना—अनिर्णीत स्वरूपों के विवेचन के पूर्व, एक और शब्द या राशि है, जिसका ज्ञान होना परमावश्यक है। और वह राशि है अनंत (Infinity)। शून्य की तरह अनंत (∞) का भी कोई भौतिक अस्तित्व नहीं है। गणित के विद्यार्थी के नाते हम जानते हैं कि $1/0 = \infty$; इसके अनुसार, अनंत शून्य का विलोम (reciprocal) है। इसकी परिभाषा इन शब्दों में दी जाती है कि "अनंत वह राशि है जो इतनी बड़ी है, जितनी बड़ी होने की संभावना हो सकती है" (Infinity is a number as great as one can think of)। पुन: कोई भी राशि इतनी बड़ी नहीं हो सकती कि जिसका मान अनंत के 'बराबर' हो जाए। मानलो किसी दशा–विशेष में, राशि 9999 को अनंत मान लिया गया। अब, 9999 कोई ऐसी अंतिम राशि नहीं है जिससे बड़ी और कोई राशि हो ही नहीं सकती। अत: शून्य की भाँति अनंत भी कोई निश्चित स्थिरांक नहीं है—यह एक चरराशि (variable) है।

'कुछनहीं' (nil)' शून्य (zero) तथा अनंत (infinity) के प्राथमिक तथा मौलिक ज्ञान को हृदयंगम करने के बाद, अब हम अपने मुख्य विषय 'अनिर्णीत स्वरूप' के विवेचन पर आते हैं।

अनिर्णीत स्वरूप—जैसा कि 'अनिर्णीत स्वरूप' 'indeterminate form) शब्द का अर्थ प्रकट कर रहा है, यह किसी वस्तु या राशि का वह स्वरूप है, जिसका मान (value) अभी तक ज्ञात नहीं हो सका है या जिसके मान का परिकलन करना संभव नहीं (incalculable) है। शून्य तथा अनंत की उपर्युक्त परिभाषाओं को आत्मसात करने के बाद यद्यपि यह समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि अनिर्णीत स्वरूप वाली राशियों के मान ज्ञात करना क्यों संभव नहीं है, तथापि निम्नांकित कुछ उदाहरणों की सहायता से यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है कि वास्तव में अनिर्णीत स्वरूप वाली राशियों के मान ज्ञात करना संभव क्यों नहीं है।

(1) $\frac{\infty}{\infty}$ शून्य और अनंत की स्पष्ट कल्पना के अभाव में, अपरिपक्व गणित का विद्यार्थी ∞/∞ का मान 1 (unity) होना बतलाएगा, जो अशुद्ध है; क्योंकि ∞/∞ अनिर्णीत स्वरूप की राशि है। वह मंद बुद्धि वाला विद्यार्थी प्रश्न कर सकता है ∞/∞ का मान 1 क्यों नहीं है? आओ, उसके इस प्रश्न का उत्तर देने का

प्रयत्न करें ।

जैसा कि अनंत की परिभाषा के अंतर्गत ऊपर सिद्ध किया गया है, अनंत (∞) कोई निश्चित (अचर) राशि (fixed quantity or number) नहीं है—अनंत एक चरराशि (variable) है । जब अनंत चरराशि है तो, जब तक यह निश्चित न हो जाए कि ∞/∞ में अंश (numerator) में रखी अनंत राशि (∞) का मान हर (denominator) में रखी अनंत राशि (∞) के मान के बराबर है, तब तक अंश और हर की अनंत राशियों को एक दूसरे से काटकर, भागफल $=1$, नहीं लिखा जा सकता । अपने वक्तव्य को मैं, गणित की भाषा में इस प्रकार समझा सकता हूँ कि मानलो अंश में रखी अनंत राशि का मान ∞_n तथा हर में रखी ∞ का मान ∞_d है । 'मानलिया' ∞ का वास्तविक मान ∞_∞ है । स्मरण रहे कि मैंने 'मानलिया' शब्द प्रयोग किया है, क्योंकि ∞ का कोई वास्तविक या निश्चित true or fixed) मान नहीं होता है ।

$$\therefore \quad \frac{|\infty|}{|\infty|} = \frac{|\infty_n|}{|\infty_d|} = \frac{|\infty_\infty + a|}{|\infty_\infty + b|}$$

जबकि a और b के मान 0 से ∞ के बीच कुछ भी हो सकते हैं, क्योंकि ∞ में कुछ भी जोड़ने से प्राप्त योग ∞ ही होता है । ऐसी अवस्था में $\frac{|\infty_\infty + a|}{|\infty_d + b|}$ का मान तबतक 1 नहीं हो सकता, जब तक $a = b$ न हो जाए । यही कारण है कि ∞/∞ को अनिर्णीत स्वरूप का मानना पड़ता है ।

(2) 0/0 —क्योंकि, ∞ की भाँति, शून्य का कोई निश्चित मान नहीं है, अतः उपर्युक्त उदाहरण (1) में प्रस्तुत तर्क के आधार पर, 0/0 भी एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है ।

(3) $0 \times \infty$ —जिस प्रकार, 0 वह निम्नतम सीमा है, जिसपर किसी छोटी से छोटी राशि के पहुँचने की आशा की जा सकती है, उसी प्रकार, ∞ वह उच्चतम सीमा है, जिसपर किसी बड़ी से बड़ी राशि के पहुँचने की आशा की जा सकती है । अतः $0 \times \infty$ का मान 0 और ∞ के बीच कहीं स्थित होना चाहिए । किंतु, वह मान है क्या ? आओ, इसे मालूम करने का तनिक प्रयत्न करें ।

मानलिया 0.001 तथा इससे कम राशियों का मान शून्य है, और 999 तथा इससे बड़ी राशियों का मान ∞ है; तब 9999 भी ∞ के तुल्य है ।

$\therefore\ 0 \times \infty = 0.001 \times 999 = 0.999,$
तथा, $0 \times \infty = 0.001 \times 9999 = 9.999$

इस प्रकार, $0 \times \infty$ का कोई निश्चित मान नहीं है। अतः, $0 \times \infty$ एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है।

उपयुक्त शून्य तथा अनंत की अवधारणा के आधार पर यह सिद्ध करना कठिन नहीं है कि $1/0$, $1/\infty$, $0/1$, $\infty/1$, $\infty/0$, $0/\infty$ तथा ∞^{∞} अनिर्णीत स्वरूप की राशियाँ नहीं हैं, क्योंकि, इनके मान क्रमशः ∞, 0, 0, ∞, ∞, 0 तथा ∞ हैं।

(4) 0^0—राशि 0^0 का मान ज्ञात करना संभव नहीं है। क्यों ? अधोलिखित पदों पर विहंगम दृष्टि डालें :

$(1/10000)^{1/2} = 1/100$, तथा $(1/10000)^{1/4} = 1/10$ इत्यादि। स्पष्ट है कि यदि आधार (base) 1 से कम है और उसको स्थिर रखा जाता है, तो घात (power) जो 1 से कम है, उसके घटते जाने से पूरे पद (term) का मान बढ़ता जाता है। पद के मान के बढ़ने की किस सीमा तक अपेक्षा की जा सकती है ? क्या ∞ तक ? नहीं। इस प्रकार के पद के बढ़ने की अधिकतम सीमा 1 (unity) है; क्योंकि 1 से बड़ी संख्या का कोई भी मूल (any root) 1 से छोटा (या बराबर) नहीं हो सकता, इसका मान सदैव 1 से बड़ा (अधिक) रहेगा। अर्थात्, यदि आधार और घात दोनों ही 1 से कम हैं, तो राशि (quotient) का मान 1 से कम होगा। अर्थात्, यदि आधार को निश्चित (स्थिर) रखा जाए, और घात का मान घटाते जाएँ, तो पूरे पद का मान बढ़ता जाएगा; किंतु यह मान 1 से कम ही रहेगा।

0 का मान निश्चित नहीं है। यदि 0 का मान निश्चित होता तो 0^0 का मान ज्ञात करना संभव हो सकता था। यदि आधार (ब्रैकिटों में लिखी राशि) के 1/10000 के मान को 0 की सीमा के अंतर्गत मानलें, तो 1/10000 से कमवाली समस्त राशियों को भी 0 मानना पड़ेगा। इस प्रकार, 0^0 का मान $(1/10000)^{1/10000}$ हुआ। यदि आधार के 1/10000 के मान को 0 मानलें, तो 0^0 का मान $(1/10000)^{1/10000}$ हुआ। इस तरह, 0^0 का मान $(1/999999)^{1/10000}$ भी हो सकता है। अर्थात्, 0^0 के मानों की अनगिनत संख्या है। अतः 0^0 का कोई निश्चित मान नहीं है। अतः, 0^0 एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है।

उपर्युक्त तर्क के आधार पर 0^{∞} का मान 0 है, यह सिद्ध करना कठिन नहीं है। अतः 0^{∞} एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि नहीं है।

(5) ∞^0—यह एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है। क्योंकि, $(1000)^{1/2} = 100,$

$(10000)^{1/4} = 10$ तथा $(10000)^{1/8} = 3.3$ आदि।

स्पष्ट है कि आधार के स्थिर रहने पर, घात का मान घटाते जाने से, पद का मान घटता जाता है। इसके घटने की सीमा क्या है। क्योंकि आधार का मान 1 से अधिक है, अतः घात के घटते जाने से, पद मान के घटने की सीमा 1 है—वस्तुतः यह मान 1 से अधिक ही रहना चाहिए, क्योंकि जो राशि 1 से अधिक है, उसका प्रत्येक मूल (root) भी 1 से अधिक ही होना चाहिए; हाँ, यदि आधार के मान की सीमा 1 है, तो पद के मान की सीमा 1 हो सकती है; किंतु किसी भी दशा में, राशि का मान 1 से कम नहीं हो सकता। इस प्रकार, ∞^0 का मान 1 की सीमा के आसपास कहीं भी हो सकता है; किंतु, इसका कोई निश्चित मान ज्ञात नहीं किया जा सकता। अतः, ∞^0 एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है।

(6) $\infty - \infty$—मानलिया धनात्मक ∞ का मान ∞_1 तथा ऋणात्मक ∞ का मान ∞_2 है। पुनः मानलिया वे सब राशियाँ जिनका मान 9999 के बराबर या इससे अधिक है, उन्हें हम ∞ कहते हैं। तब हम कह सकते हैं कि $\infty_1 = 9999 + x$, जबकि x एक धनात्मक राशि है। इसी प्रकार, हम ∞_2 का कोई मान मान सकते है, जिसके साथ शर्त यह है कि उसका मान 999 से कम नहीं होना चाहिए। सरलता की दृष्टि से, मानलिया $\infty_2 = 9999$; तब, $\infty_1 - \infty_2 = x$, जबकि x का मान 0 से ∞ के बीच कुछ भी हो सकता है। अर्थात्, $\infty - \infty$ का मान निश्चित नहीं है। अतः, $\infty - \infty$ एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है।

(7) 1^∞—अब तक की धारणा के अनुसार, 1 पर 1 से अधिक कोई भी घात चढ़ाने से उसका मान 1 (unity) ही रहना चाहिए। किंतु, जब यह कहा जाता है कि 1^∞ एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है, तो मस्तिष्क चकराने लगता है। परन्तु, वास्तविकता यह है कि 1^∞ एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है। प्रश्न उठता है कि यह कैसे है? आओ इस समस्या को हल करें।

1^∞ का मान ज्ञात करने में उत्पन्न होने वाली अपरिहारीय बाधा को, विस्तार के लिए, "A Text-book on Differential Calculus," by Dr. Gorakh Prasad, 1959, p. 251, Pothishala (P) Ltd. Lajpat Road, Allahabad, सदृश किसी प्रामाणिक (standard) पुस्तक को देखा जा सकता है, यहाँ पर हम इस विषय को संक्षेप में समझाने का प्रयत्न करेंगे।

प्रस्तुत लेख के प्रारम्भ में दी गई शून्य की परमाल्प राशि के रूप में जो परिभाषा दी गई है, उसके आधार पर राशि 1.0000000001 की सीमा, व्यावहारिक दृष्टि से, 1 है। अब यदि 1 से तनिक अधिक, शून्य के सदृश छोटे स्तर की वृद्धि, राशि की (1 से अधिकवाली) घात को क्रमशः बढ़ाकर अनंत (∞) तक की सीमा तक पहुँचने वाली राशि करदें (जैसे, मान लिया, $(1.0000000001)^{1000000000}$ आदि] तो गुणन-फ़ल का मान क्रमशः बढ़कर ∞ की सीमा तक पहुँच सकता है। इसी प्रकार, (1 x), ज़बकि x शून्य की सीमा तक पहुँचने वाली छोटी राशि है, इसके मान की सीमा 1 होगी, और $(1—x)^{\infty}$ का मान 1 से बहुत कम होगा। इस प्रकार, 0 तथा ∞ के मान निश्चित न होने के कारण, 1^{∞} का मान निश्चित नहीं हो पाएगा। अतः 1^{∞} एक अनिर्णीत स्वरूप की राशि है।

———

निम्न कथनों में त्रुटि बताइये

—विजयेन्द्र कुमार
रीडर गणित विभाग
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
तथा
—कु० सरिता रानी

प्रथम कथन—

पहले हम आपसे एक योगफल के प्रश्न पर बात कर रहे हैं। प्रश्न इस प्रकार हैं
$1-1+1-1+1-1+1-1\ldots\ldots\ldots\ldots$

इस प्रश्न को आप एक पद तक योग करें तो योग 1, दो पदों का योग शून्य, तीन पदों का योग पुन: 1 तथा 4 पदों का योग शून्य इत्यादि, अर्थात् आप कहीं तक भी योग करें पदों की सम संख्या का योग शून्य तथा विषम संख्या का 1 होगा। आप पदों की अनंत संख्या भी ले सकते हैं अब ऊपर वाले प्रश्न को दूसरे ढंग से लिख रहे हैं।

$$S=(1-x+x^2-x^3+x^4-x^5+x^6\ldots\ldots)$$

$x=1$ दोनों प्रश्न एक ही हैं। लेकिन गुणोत्तर श्रेणी के सूत्रों का प्रयोग करने पर

$$S_\infty=\left(\frac{1}{1+x}\right)x=1$$

अर्थात् पदों का अनंत तक योग

$$S_\infty=\frac{1}{1+1}=\frac{1}{2}$$ इसे आप क्या कहेंगे ?

द्वितीय कथन—

आप एक नगर की जनसंख्या के प्रश्न पर विचार कीजिए। एक नगर के सब लड़के किसी दूसरी जगह जाकर बसते हैं। कालान्तर में वे गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करते हैं उनके बच्चे होते हैं। क्या इस प्रकार उस जगह की जनसंख्या की वृद्धि हुई। अपना उत्तर अभी मत बताइये।

इस समस्या पर इस प्रकार विचार कीजिए कि एक पुरुषों का समुच्चय x है, तथा एक पुरुष समेत उनके पूरे परिवारों का समुच्चय y है। फलन $F : x \rightarrow y$ इस प्रकार है कि प्रत्येक परिवार संबंधित पुरुष का प्रतिबिंब है। स्पष्ट है x तथा y में एक-एक संगतता है। अतः दोनों समुच्चयों में तत्वों की संख्या बराबर है। अतः जनसंख्या मे वृद्धि नहीं हुई। आशा है आप का उत्तर इसके विपरीत रहा होगा। तब त्रुटि कहाँ है ?

तृतीय कथन—

$1 \quad 2+3-4+5 \quad 6+7-8\ldots \quad \ldots \quad \ldots$ (A) पर विचार करें। यदि n पदों के योग को S_n कहें तो $S_1=1$, $S_2=-1$, $S_3=2$, $S_4=-2$, $S_5=3$, $S_6= \quad 3$ इत्यादि। इस प्रकार जैसे-जैसे पदों की संख्या बढ़ती जाती है पदों का योग धनात्मक रूप में (n विषम होने पर) तथा ऋणात्मक रूप में (n सम होने पर) बढ़ता जाता है। इस प्रकार n अत्याधिक बड़ा होने पर योग धनात्मक अथवा ऋणात्मक अनंत होगा।

अब दूसरे ढंग से सोचिये

(A) को इस प्रकार लिखा जा सकता है :

$$[F(x)=1-2x+3x^2-4x^3+5x^4-6x^5 \ldots \quad \ldots \quad \ldots \quad \ldots] \quad (B)$$

$$x=1$$

दोनों ओर —x से गुणा करने पर

$$-xf(x)=-x+2x^2-3x^3+4x^4-5x^5+\ldots \quad \ldots \quad \ldots\ldots\ldots \quad (C)$$

(B) में से (C) को घटाने पर

$$(1+x)\ f(x)=1-x+x^2-x^3\ldots \quad \ldots\ldots \quad \ldots\ldots \quad \ldots \text{अनन्त तक}$$

$$(1+x)\ f\ (x)=\frac{1}{1+x} \text{ (सूत्र से)}$$

$$F(x)=\frac{1}{(1+x)^2}$$

$$F(x)_{x=1}=\frac{1}{(1+1)^2}=\frac{1}{4}$$

इस प्रकार योग अनन्त तक जोड़ने पर 1/4 आता है। आशा है आप उपरोक्त तीनों कथनों में त्रुटि ज्ञात करने में सफल होंगे। निम्न कथनों पर भी इसी प्रकार विचारें।

चतुर्थ कथन—

एक परिवार में पाँच सदस्य हैं जिनकी ऊँचाइयाँ क्रमशः 6.5 फीट, 6 फीट, 4 फीट, 3.5 फीट तथा 3 फीट है, परिवार को रास्ते में पड़ने वाली एक नदी पार करनी

थी, परिवार के कर्ता ने परिवार के सदस्यों की औसत ऊँचाई ज्ञात की जो $\frac{6.5+6+4+3\ 5+3}{5}$ अर्थात् 4.6 फीट आयी। फिर नदी की औसत गहराई ज्ञात की गयी।

वह $\frac{\cdot 5+3+6+\cdot 3+\cdot 5}{5}=2.6$ फीट प्राप्त हुई। परिवार के कर्ता ने परिवार का नदी पैदल चल के पार करना औसत ऊँचाई औसत गहराई से अधिक होने के कारण निरापद घोषित किया, परिणाम का अनुमान आपने लगा लिया होगा। त्रुटि कहाँ हुई ?

पंचम कथन –

किसी देश की सरकार को सरकारी खर्च चलाने के लिए देश की जनता पर कर लगाने की आवश्यकता थी। आय का सर्वेक्षण करने के पश्चात् कर लगाने में अधिक समय लगता। अतः यह तय किया गया कि प्रत्येक नगर के प्रमुख की आय का विवरण लेकर उसका औसत ज्ञात करके प्रत्येक परिवार पर से उसका दशांश कर के रूप में लिया जाय। इस कर निर्धारण प्रणाली में कुछ दोष है क्या ?

पर्यावरण और उसकी दृष्टि से गढ़वाल के जल स्रोतों का अध्ययन

—डा० कृष्ण कुमार

वर्तमान युग में पर्यावरण विज्ञान या पर्यावरण का अध्ययन एक अति आधुनिक विज्ञान के रूप में विकसित हुआ है। एक नया विज्ञान होने पर भी इसने बहुत अधिक प्रसिद्धि, लोकप्रियता और व्यापक्ता पाई है। इस विज्ञान के अन्तर्गत किसी भी प्रदेश, स्थान और देश के विविध पक्षों—संस्कृति, राजनीति, अर्थव्यवस्था, धर्म, दर्शन, प्रकृति, विज्ञान, वनस्पति, जन्तु, भूगोल, जलवायु आदि का अध्ययन करके उनको मनुष्य जीवन के लिये अधिकतम उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। भारतवर्ष में भी इस अध्ययन की उपयोगिता पर बहुत बल दिया गया है।

किसी भी देश का वर्तमान पर्यावरण उस देश के अतीत के पर्यावरण का परिणाम है तथा वह भविष्य के पर्यावरण के बीज बो रहा होता है। अतः उस देश के वर्तमान पर्यावरण को अतीत और भविष्य के पर्यावरण से हम नितान्त पृथक् करके नहीं देख सकते। अतः यह आवश्यक है कि हम यह अध्ययन करें कि अतीत का पर्यावरण किस प्रकार का था, उसका वर्तमान पर क्या प्रभाव पड़ा है और भविष्य में क्या प्रभाव होने की सम्भावनायें हैं। अतः भारतवर्ष के वर्तमान पर्यावरण के अध्ययन को अधिक तथ्यपूर्ण, व्यापक और सही करने के लिए इस देश के प्राचीन पर्यावरण का अध्ययन करना उपयोगी होगा। इसके लिए भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य का, विशेष रूप से वैदिक और संस्कृत साहित्य का अध्ययन निश्चित रूप से वांछनीय है।

प्राचीन पर्यावरण के अध्ययन के लिये प्राचीन परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। यह अध्ययन हमको प्राचीन ऋषियों और मनीषियों के दृष्टिकोण से करना चाहिये। भारतवर्ष के प्राचीन साहित्य का पर्यावरण की दृष्टि से अध्ययन करने पर उससे न केवल प्राचीन परम्पराओं का बोध होगा, उनके द्वारा हम आधुनिक गतिविधियों में भी लाभ उठा सकते हैं। प्राचीन ऋषियों और कवियों ने अपनी साहित्यिक रचनाओं में जीवन के विविध पक्षों पर समग्र दृष्टि से विचार किया था और मानव के जीवन में उन्नति एवं शान्ति के मार्ग को प्रशस्त किया था।

उदाहरण के रूप में आदिकवि वाल्मीकि को लिया जा सकता है। ईश्वरीय काव्य वेदों के पश्चात् वाल्मीकिरचित रामायण संस्कृत भाषा का प्रथम काव्य ही नहीं अपितु महान् चरित काव्य है। इसमें आदिकवि ने महापुरुष राम के जीवनचरित के माध्यम से मानव-जीवन से सम्बन्धित सभी व्यवहारों का तथा मानवजीवन के लिये उपयोगी सभी द्रव्यों का सुन्दर मनोग्राही उपदेश दिया है।

इस महान् काव्य में एक ओर जहाँ जीवन के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना की गई है, वहीं दूसरी ओर मनुष्य का प्रकृति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध भी स्थापित किया गया है। यह सृष्टि पंचमहाभूतो—आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी से निर्मित है । इनकी पवित्रता मानव को पवित्र और स्वस्थ रखती है। इनका प्रदूषण मानव को अपवित्र और अस्वस्थ बना देता है। वर्तमान वैज्ञानिक-औद्योगिक युग में प्रकृति के इन तत्वों का प्रदूषण निरन्तर बढ़ता जा रहा है, जिससे मानव के अस्तित्व को ही खतरा उत्पन्न हो गया है। प्रदूषण के इन दोषों से बचने के लिये प्राचीन ऋषियों ने जिन पर्वतों, वनों और सरिता-संगमों पर आने के उपदेश दिये थे, मानव ने उनको भी परिदूषित करना प्रारम्भ कर दिया है।

वाल्मीकि ने प्रदूषण से बचने तथा प्रकृति के इन पंच तत्त्वों को शुद्ध रखकर इनसे सभी प्रकार की पवित्रताओं को स्थापित करने का उपदेश दिया था। उदाहरण के रूप में हम जल को ले सकते हैं। पतितपावनी गंगा के माध्यम से उन्होंने जल को पवित्र रखने, प्रदूषण से बचाये रखने तथा उसके द्वारा मानवमात्र को पवित्र करने का उपदेश दिया था। स्वर्ग से गंगा का अवतरण इसी सन्देश की अभिव्यंजना करता है।

जल की पवित्रता तथा पावन करने की सामर्थ्य का उपदेश वैदिक संहिताओं में है। पृथिवी पर जल का आगमन मेघों द्वारा होता है। मेघ जल बरसाकर पृथिवी को सस्य श्यामला करने के साथ ही प्रदूषण से रहित भी करता है। इसी को आलंकारिक रूप से ऋग्वेद में ५ वें मण्डल के ८३वें सूक्त में कहा गया है कि गरजता हुआ पर्जन्य दुष्कृतों का विनाश करता है। आकाश से जल बरसाने वाले मेघ की धारायें गिर कर पृथिवी को सिंचित करती हैं। जब वह दुष्कृतों के प्रदूषण को नष्ट कर देता है, तो पृथिवी पर प्रसन्नता व्याप्त हो जाती है।

अथर्ववेद में जल को रोगनाशक, प्रदूषण का विनाशक और कल्याणप्रद कहा गया है। हम प्रतिदिन अथर्व वेद के इस मन्त्र से प्रार्थना करते हैं—

शन्नो देवी रमिष्ट य आपो भवन्तु पीत ये शं यो रमि सूवन्तु नः ।।

अथर्व. १. ६. १.११

अथर्व वेद में सभी स्रोतों से प्राप्त होने वाले जलों से कल्याण की कामना की गई है—

शं न आपोध्न्व्याः शभु सन्त्वनूप्याः । शं नः खनित्रिमा ।
आपः शभु याः कुम्भ आमृताः शिवाः नः सन्तु वार्षिकीः ।।

अथर्व १. ६. ४.

आदिकवि वाल्मीकि ने गंगावतरण की कथा की कल्पना में जल का पावनत्व और प्रदूषणविनाशक गुण अभिव्यंजित किया है। समुद्र से उठने वाले मेघ ऊँचे आकाश की यात्रा करते हुये हिमालय के उच्च शिखरों पर बरस कर हिम रूप में जम जाते हैं। वहां से यह जल मुक्त होकर गंगा सरिता के रूप में पृथिवी को सिंचित करता हुआ सकल मलों को, प्रदूषणों को हरता हुआ धरा को हरा-भरा करता है। वस्तुतः आकाशरूप स्वर्ग से उतरी गंगा हिमानीरूप शिव की जटाओं में कैद होकर पुनः विमुक्त हो जल धारा रूप में बहती हुई जन-जन के पापों का, धरती के प्रदूषणों का विनाश करती है। हिम के पिघलने से यह सरिता वर्ष भर जल से भरी रहकर मानव का निरन्तर उपकार करती है।

भारत का इतिहास गंगा का इतिहास है। भारत की संस्कृति गंगा की संस्कृति है। भारत का पर्यावरण गंगा का पर्यावरण है। यह गंगा या भागीरथी गढ़वाल के गोमुख हिमानी से प्रादुर्भूत होकर गंगोतरी, उत्तरकाशी, टिहरी, देवप्रयाग आदि पर्वतीय स्थानों को पार करती हुई और गढ़वाल में उदित होने वाली सभी सरिताओं की अनन्त स्वच्छ पवित्र जलराशि को समेटे हुये हरिद्वार में मैदानों में उतर आती है। हिमालय से उतरती इस सरिता ने हरिद्वार में ही मैदानों में प्रवेश किया है तथा यहां से पर्वतों में जाने का मार्ग खुलता है। अतः इस स्थान को गंगाद्वार नाम दिया गया था। गंगा और इसकी पवित्र पर्वतीय भूमि को स्वर्ग कहा गया।

गंगा स्वयं में एक नदी नहीं है, अपितु अनेक सरिताओं का समुच्चय है। वैसे तो हिमालय से निकलने वाली नदियों के दो समूह हैं—सिन्धु नदी समूह और गंगा नदी समूह। परन्तु जो नदियां पूर्व में बंगाल की खाड़ी में जाती हैं, वे गंगा में मिलकर ही जाती हैं। गढ़वाल से लेकर कामरूप तक की सभी नदियों का मिलन गंगा में हुआ है। स्वयं गढ़वाल में उत्पन्न होने वाली नदियां अधिकांश में हरिद्वार तक गंगा में मिल जाती हैं। इनमें

एक यमुना ही ऐसी है, जो गढ़वाल की पश्चिमी पर्वतश्रेणी बन्दरपुच्छ से निकलकर यमुनोतरी तीर्थ होकर पश्चिमी गढ़वाल की टोंस आदि नदियों के जल को समेट कर स्वतन्त्र रूप से गढ़वाल से बाहर निकल सकी है।

पुराणों में वर्णन है कि स्वर्ग से गिरकर जब शिव की जटाओं में गंगा कैद हो गई, तो इसके पश्चात् वह तीन धाराओं में निर्मुक्त हुई। गढ़वाल में भी इस गंगा के तीन स्रोत हैं—भागीरथी, मन्दाकिनी और अलकनन्दा। इन तीनों नदियों का जल देवप्रयाग में एकत्रित हो जाता है और वहां से यह गंगा कहलाती है। भागीरथी का उद्गम गोमुख ग्लेशियर से है तथा देवप्रयाग में इसमें अलकनन्दा का मिलन होता है। इस मध्य इसमें अनेक नदियां—केदार गंगा, जाह्नवी गंगा, असी-वरुणा, मिलंगना, शान्ता आदि अपनी शुभ्र निर्मल सतत जलराशि को मिलाती हैं। मन्दाकिनी का उद्गम केदारनाथ से ऊपर बासुकि ताल के समीप से हिमशिखरों से हुआ है। यह भी अनेक नदियों—स्वर्ग गंगा, वैतरणी, सोम गंगा, सरस्वती, चन्द्रावती, अलस्तर आदि के जलों को समेट कर रुद्रप्रयाग में अलकनन्दा में विलीन हो जाती है। अलकनन्दा का उद्गम बदरीनाथ से ऊपर सतीपन्थ और अलकापुरी से हुआ है। यह अपने साथ सरस्वती, ऋषि गंगा, धवलगंगा, विरही, मन्दाकिनी को अपने आलिंगन में बांधकर देवप्रयाग में भागीरथी से संयुक्त हो जाती है। यहां इन सभी नदियों का जल संयुक्त रूप से गंगा कहलाता है।

गढ़वाल की नदियों को सामान्य रूप से दो विभागों में विभक्त कर सकते हैं :—

१. वे नदियां जो हिमावृत्त शैल शिखरों और हिमानियों से उद्भव होती हैं।
२. वे नदियां जो स्रोतो से निकलती हैं।

भागीरथी, मन्दाकिनी और अलकनन्दा तथा इनमें मिलने वाली असंख्य छोटी-बड़ी नदियां प्रायः हिम के पिघलने से उत्पन्न होती हैं। परन्तु अनेक नदियां ऐसी भी हैं, जिनका उद्गम भूमि के अन्तर्गत जल से झरनों के रूप में होता है। वर्षा का जल पर्वतीय भूमि में रिसकर चट्टानों से परिवेष्टित भूमि-अन्तर्गत विशाल जलाशयों में संग्रहीत होता है। यहाँ से यह स्रोतों के रूपों में निकल कर नदियों का रूप धारण कर लेता है। पूर्वी तथा पश्चिमी नयार, इनमें सबसे बड़ी नदी है। ये दोनों धारा कोटद्वार-पौड़ी के मध्य सतपुली में संयुक्त होकर व्यासघाट में गंगा में मिल जाती हैं। पश्चिमी हिंवल, पूर्वी हिंवल, मालिनी, अलस्तर, शान्ता, खांकड़ा आदि असंख्य छोटी नदियां झरनों के रूप में निकल कर कुछ देर बहकर बड़ी नदियों में मिल जाती हैं।

गढ़वाल मण्डल में इन नदियों के अतिरिक्त असंख्य ग्लेशियर हैं, जिनसे इन नदियों का उद्गम होता है। कैम्प्टीफाल, बसुधारा, टाइगरफाल, आदि प्रपात हैं। सप्तर्षि कुण्ड, हेमकुण्ड, रूपकुण्ड, डोडीताल, केदारनाथ, देवरिया ताल, सतोपन्थ, वासुकिताल, गोहनाताल, गान्धी सरोवर आदि विशाल निर्मल जल से परिपूर्ण सरोवर हैं। गढ़वाल के पर्यावरण के अध्ययन के लिये इन सबका अध्ययन अनिवार्य है।

असंख्य छोटी-बड़ी शाखा नदियों को अपने में समेट कर गंगा नदी इस हिमालय गढ़वाल से अनन्त जलराशि को प्रतिक्षण प्रवाहित करती हुई उत्तर भारत के मैदानों को सींचती हुई समुद्र में मिल जाती है। हिमालय के पिछले हिम से उद्भूत गंगा का यह निर्मल जल किसी समय अति पवित्र पावन था। परन्तु इसमें भी निरन्तर प्रदूषण की समस्या उपस्थित हो गई है। गढ़वाल में ही गंगा और इसकी शाखा सरिताओं के तट पर अवस्थित आबादियों के लिये इस जल का बिना शुद्ध किये उपयोग में लाना रोगोत्पत्ति का कारण बन गया है। इन नगरों की सारी गन्दगी नदियों में ही बहाई जाती है, जो जल को प्रदूषित करती हैं। नई-नई सड़कों का निर्माण, उन पर निरन्तर डीजल-पैट्रोल का धुआं उड़ाती मोटरगाड़ियां, नदियों पर स्थान-स्थान पर बनाये जाते हुए डाम, वृक्षों के निरन्तर कटान से वनस्पति रहित होती पर्वतभूमियां, नई बढ़ती आबादिया और उनके कारण नदियों में मिलने वाली मलिनतायें इन पर्वतीय प्रदेशों के जल, वायु, भूमि और आकाश में निरन्तर प्रदूषण को बढ़ा रहे हैं। इससे इस क्षेत्र के पर्यावरण में निरन्तर परिवर्तन भी उत्पन्न हो रहा है। अतः आवश्यक है गंगा नदी के उद्गम इस क्षेत्र के पर्यावरण का समुचित अध्ययन करके, प्रदूषण को रोकने के उपाय किये जायें तथा यहां के जलस्रोतों, वनस्पतियों, खनिजों आदि का समुचित प्रकार से दोहन करके उसका उपयोग देश-वासियों की खुशहाली के लिये किया जाये।

वाल्मीकि ने भगीरथ के माध्यम से गंगा के स्वर्ग से अवतरण की कल्पना करके उसमें जिस पावनता की, सुख-समृद्धि की, त्रिविध दोष निवारण की कल्पना की थी, आज पुनः आवश्यकता हो गई है कि कोई नया भगीरथ उस सम्पूर्ण गंगा घाटी का अध्ययन करके प्रदूषण के दोषों का निवारण करे और यह गंगा इस देश के वासियों के तन-मन के तापों का निवारण करके सबको सुखी-समृद्ध करे।

कुछ घरेलू नुस्खे

चन्द्रप्रकाश, प्रयोगशाला सहायक, वनस्पति विज्ञान विभाग
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय

वर्तमान युग में रोगों के उपचार के लिए एवं स्वस्थ बने रहने के लिए नाना प्रकार की औषधियों का प्रयोग हो रहा है। इनमें से अनेक अंग्रेजी औषधियों के गम्भीर दुष्प्रभाव (Side Effects) देखने में आते हैं। हमारे देश में ऐसे कितने ही घरेलू नुस्खे हैं जो अनेक प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए पुराने समय से सफलतापूर्वक प्रयोग में लाये जाते रहे हैं। उनकी एक अन्य विशेषता यह भी है कि उनके कोई दुष्प्रभाव (Side-Effects) नहीं हैं।

प्रस्तुत लेख में केवल कुछ घरेलू नुस्खे दिये जा रहे है :—

१. जुकाम:–(अ) तुलसी के पत्ते २० ग्राम, काली मिर्च २ ग्राम, दालचीनी २ ग्राम, सौंठ २ ग्राम, लौंग ५, और तेजपात १ ग्राम, गुड़ स्वाद के अनुसार ५०० ग्राम पानी में पकायें, जब पानी आधा रह जाए तो प्रयोग में लाएँ।

(ब) १० बताशे, ५ काली मिर्च १०० ग्राम पानी में पकाकर पीयें।

२. खांसी:–(अ) लौंग, अनार के छिलके का चूर्ण शहद से चाटें।

(ब) लहसुन भूनकर शहद में चटायें।

(स) यदि पान का प्रयोग करते हों तो पान में अजवायन रखकर उसका रस चूसें।

(द) हल्दी दूध में उबालकर पियें।

३. नजला :– ५० ग्राम काली मिर्च, १०० ग्राम तुलसी के पत्ते, २५ ग्राम काला नमक, १० लौंग, आदि को पीसकर छोटी-छोटी गोलियाँ बना लें और प्रातः-सायं और रात्रि में गर्म जल से प्रयोग करें।

४. सफेद दाग:–(अ) बाकची ३ ग्राम, मूली के बीज २ ग्राम, सीपी की भस्म २ ग्राम, सिरका २० मिली०। उपरोक्त में से प्रथम तीनों चीजों को अच्छी प्रकार से पीसकर फिर सिरके पेस्ट बनाकर सफेद दाग पर लगाकर करीब दो घण्टे धूप में बैठें। साबुन लगाकर न नहायें।

(ब) चाक्सू के बीज, नर कचूर, रसूवत और सफेद कत्था, प्रथम तीनों चीजें बराबर मात्रा में पीसकर, कत्था पानी में भीगो दें। जब खूब फूल जाए तो पेस्ट बनाकर प्रयोग में लाएँ।

५. भूख कम लगना, तथा कमर दर्द :—पीपल बड़ी, सौंठ, काली मिर्च और मेथी चारों चीजें बराबर मात्रा में लेकर पीसकर चूर्ण बनाकर शीतल जल से प्रयोग करें। यदि पेट साफ न होता हो तो गर्म जल का प्रयोग करें।

६. जोड़ों में दर्द :—घी क्वार का रस १०० ग्राम, ५० ग्राम शहद में मिलाकर ८-१० दिन धूप में रखें फिर उसमें लगभग ५० ग्राम अजवायन पीसकर मिला लें। फिर २ ग्राम प्रातः-सायंकाल प्रयोग करें।

७. मच्छरों से सुरक्षा :—२०० ग्राम सरसों का तेल तथा १०० ग्राम नींबू के पत्ते, तेल में डालकर पकायें। जब तेल की मात्रा आधी रह जाए, उतार लें। रात को सोने से पूर्व हाथ-पैरों और चेहरे पर लगाकर सोयें मच्छर नहीं काटेंगे।

८. चाकू आदि से कटने पर :—अनेक बार घरों में सब्जी आदि काटते समय चाकू से कट जाता है, यदि गहरा भी कट जाए तो घबराना नहीं चाहिए। घरों में आम के अचार का मसाला होता ही है तुरन्त बांध देना चाहिए फिर किसी एन्टीसेप्टिक की आवश्यकता नहीं चाहे पानी में भी भीगे। घाव ठीक तो होगा ही अंग पर निशान भी नहीं बनेगा। परन्तु खोलें तब ही जब आश्वस्त हो जायें कि घाव ठीक हो गया है।

—०—०—

टिहरी बांध : पर्यावरण एवं विकास (तथ्यात्मक विवेचन)

—डा० बी० डी० जोशी
अध्यक्ष
जन्तु विज्ञान विभाग,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय,
हरिद्वार ।

उत्तर प्रदेश में टिहरी गढ़वाल में निर्माणाधीन टिहरी बांध समूचे देश व विश्व में चर्चा का विषय बन गया है। टिहरी बाँध के निर्माण को लेकर समूचे देश के वैज्ञानिकों, पर्यावरणप्रेमियों, पत्रकारों और बुद्धिजीवियों में मतभेद हैं । कुछ इसके निर्माण के पक्ष में हैं, व कुछ बाँध निर्माण के विरोध में। जबकि बाँध निर्माण का कार्य आधे से ज्यादा हो चुका है । टिहरी बाँध का निर्माण टिहरी गढ़वाल में भागीरथी तथा भिलंगाना नदियों के संगम से कुछ नीचे हो रहा है । परन्तु अब अनेक प्रकार के मतान्तरों के कारण बहुउद्देश्यीय टिहरी बांध परियोजना अनिश्चितता के घेरे में है ।

बांध-स्थल टिहरी हो क्यों ?

टिहरी में बांध बनाने की सिफारिश सन् १९४८ में सबसे पहले अधिकृत रूप से की गयी थी । साठ के दशक में इस क्षेत्र का विस्तृत अध्ययन करने के उपरान्त बांध बनाने के लिए टिहरी को उपयुक्त क्षेत्र घोषित किया गया। मुख्य कारण यह था कि टिहरी तीन तरफ से पर्वतों से घिरी हुई घाटी का रूप है व इस क्षेत्र में आसानी से बाँध बनने की सम्भावना बनती है । विगत दो दशकों से प्रायः प्रति वर्ष ही लेखक को भागीरथी तथा अलकनन्दा घाटियों में में जाने के अवसर मिलते रहे हैं। टिहरी बाँध को प्रत्येक चरण से आगे बढ़ते-बनते देखा है। हमेशा ही यह विचार आता रहा है कि भागीरथी के इस समर्थ हिमालय क्षेत्र के जलगम को जो पानी मानसून द्वारा प्रतिवर्ष मिलता है, यदि उसे हम संचित कर पाते तो हजारों हाथों को, अनेकानेक उद्योगों, लाखों घरों को प्रकाश और करोड़ों को भरपेट भोजन से तृप्त कर सकते ।

भू–गर्भीय दृष्टि से स्थल की क्या स्थिति है, भूपटल की संरचना पानी के विशालकाय भण्डारण हेतु उपयुक्त है अथवा नहीं, यह तो विषय-विशेषज्ञ ही बता सकते हैं, और यही मूलतः विवाद का वर्तमान कारण है। परन्तु यह स्पष्ट है कि प्राकृतिक जल संचयन और उपयोग हेतु हमारे पास इससे अधिक उपयुक्त स्थान हिमालय की इन घाटियों में उपलब्ध नहीं है। टिहरी बांध परियोजना के स्थल की भूगर्भीय परिस्थिति क्या है, इसे अन्तिम रूप से कैसे कहा जा सकता है? निश्चय ही हमारा ज्ञान श्रेष्ठता के अन्तिम एवं उच्चतम शिखर पर नहीं है। किसी भी विषय में नहीं है। अतः यदि हमारा आज का श्रेष्ठतम वैज्ञानिक भी अपनी किसी भी प्रकार की राय देता है तो उसे हम अन्तिम राय तो नहीं ही कह सकते। इस क्षेत्र की सबसे बड़ी विशेषता होगी मानसूनी जल का भरपूर सदुपयोग। साल भर विद्युत उत्पादन, वर्ष भर हजारों उद्योगों हेतु विद्युत तथा बाढ़ नियन्त्रण हेतु श्रेष्ठतम उपाय।

टिहरी का इतिहास :

टिहरी नगर की स्थापना २८ दिसम्बर सन् १८१५ में महाराजा सुदर्शनशाह ने करायी थी। १४ मई १८०४ में सुदर्शनशाह के पिता प्रद्युम्नशाह खुड़बुड़ा (देहरादून) में गोरखों से लड़ाई में लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। नेपाली राज्य के सेनापति अमरसिंह थापा ने कुछ समय तक टिहरी में राज किया फिर अंग्रेजों से गोरखों की हार हुई। इसी के पश्चात् सुदर्शनशाह व अंग्रेजों में सिगोली की सन्धि हुई। सुदर्शनशाह को टिहरी व उत्तरकाशी का राजा बनाया गया और पौड़ी व चमोली को अंग्रेजो ने हस्तगत कर लिया। यहाँ पर नदियों के संगम होने के कारण इसे 'त्रिहरी' का नाम दिया गया जो बाद में टिहरी कहलाया। शाह वंश के बाद टिहरी पर पंवार वंशी राजाओं की छः पुश्तों ने राज किया।

टिहरी बांध परियोजना :

टिहरी क्षेत्र को बांध निर्माण के लिए उपयुक्त पाये जाने के बाद टिहरी बाँध परियोजना सन् १९६९ में बनी थी। सन् १९७२ में योजना आयोग ने इस परियोजना को स्वीकृति दी तथा सन् १९७६ में उत्तरप्रदेश सरकार ने टिहरी बांध परियोजना को स्वीकृति दी। इस बांध के बन जाने पर भारत विश्व का पहला देश होगा, जहां इतनी ऊंचाई पर एक बड़ी ऊर्जा शक्ति वाला बाँध होगा।

टिहरी बांध ऋषिकेश से लगभग ८५ किलोमीटर दूर भागीरथी और भिलंगाना नदी के संगम से लगभग १.५ किलोमीटर नीचे की ओर बनाया जा रहा है। इस बांध की ऊंचाई २६०.५ मीटर होगी व इसका निर्माण कंक्रीट व चिकनी मिट्टी से

होगा। बांध के शीर्ष की चौड़ाई २० मीटर, लम्बाई लगभग ५७५ मीटर तथा शीर्ष सतह ३३६.५ मीटर होगी। सन् १६७२ में टिहरी बांध से ६५० मेगावाट शक्ति की परियोजना बनायी गयी थी तथा इसके निर्माण कार्य में २०० करोड़ रुपये की राशि का निर्धारण किया गया। परन्तु अब टिहरी बांध लगभग २४०० मेगावाट शक्ति वाली एक विशाल योजना है और इस पर सम्भावित व्यय ३,००० करोड़ रुपये होने की सम्भावना है तथा अब तक इस बांध पर लगभग ५०० करोड़ रुपये की राशि व्यय हो चुकी है।

टिहरी बांध के निर्माण में बने जलाशय का फैलाव भागीरथी नदी में ४.४ किलोमीटर तक एवं भिलंगना नदी में २५ किलोमीटर तक होगा। इस जलाशय का सामान्य क्षेत्रफल ४२ वर्ग कि० मी० होगा, किन्तु मानसून काल में यह क्षेत्रफल लगभग ४८ वर्ग कि० मी० होगा। इस जलाशय में पानी भरने के कारण टिहरी नगर व २२ गांव पूर्ण रूप से एवं आसपास के लगभग ७० गांव आंशिक रूप से डूबेंगे।

टिहरी बांध परियोजना के अन्तर्गत तेज जल-प्रवाह वाली चार सुरगें (टी-१, टी-२, टी-३ एवं टी-४) का निर्माण पूर्ण हो चुका है तथा इस समय 'काफर बांध' के प्रथम चरण का निर्माण लगभग १२.६१ करोड़ रुपये की लागत से शीघ्र ही पूरा किया जाना है। वस्तुतः यह कार्य १५ जुलाई १६६० तक अर्थात् मानसून के पूर्ण प्रभावकाल से पूर्व ही समाप्त हो जाना चाहिए क्योंकि इससे पहले नदी में पानी कम होता है। इस कार्य को करने के लिए मिट्टी व पत्थरों का छोटा-सा अवरोध नदी के बहाव मार्ग में खड़ा करके नदी को दक्षिणी किनारे की टी—३ एवं टी—४ सुरगों में कर दिया गया है। बहाव मार्ग बदलने के कारण नदी सूख गयी है व वहां पर नदी की २०—३० मीटर की खुदाई करके इसमें चिकनी मिट्टी एवं कंक्रीट भरा जाना है।

टिहरी बांध परियोजना के अन्तर्गत बनायी गयी सुरंगों का व्यास ११ मीटर है। यह मुख्यतः भागीरथी के पानी को मोड़ने के लिए बनायी गयी हैं। और इन सुरंगों का दूसरा मुख्य कार्य जलप्रवाह को तेज करना होगा। टिहरी बांध की सक्रिय संचयन क्षमता २६१ ५० करोड़ घन मीटर होगी।

टिहरी बांध परियोजनान्तर्गत विस्थापन एवं पुनर्वास

टिहरी बांध बनने के कारण इस क्षेत्र के जलमग्न हो जाने से १२,००० के लगभग टिहरी नगर के निवासी एवं लगभग ३४,००० ग्रामवासी विस्थापित किए जा रहे हैं। टिहरी नगर एवं डूब क्षेत्र के गांव, भूमि व भवनों का अध्याप्तिकरण किया

जा रहा है । नया टिहरी नगर पुराने टिहरी नगर से लगभग २९ कि०मी० की दूरी पर बसाया जा रहा है । विस्थापन एवं पुनर्वास योजना के अन्तर्गत जो ग्रामीण व भूस्वामी भूमि के बदले भूमि लेना चाहते हैं, उन्हें देहरादून में वन-भूमि कृषि योग्य बना कर दी जा रही है । देहरादून में डोईवाला के निकट भानियावाला, रायवाला, तथा हरिद्वार जनपद में पथरी ब्लाक में पुनर्वास योजना के अन्तर्गत विस्थापितों को बसाया जा चुका है व कुछ को बसाया जा रहा है । विस्थापितों को सहायता दो प्रकार से दी जायेगी— या तो भूमि के बदले भूमि और या फिर भूमि के बदले पैसा । निजी भवनों का मूल्य वर्तमान निर्माण दरों पर निकाला जायेगा । इस मूल्य का भवन की आयु के आधार पर अवमूल्यन कर प्रतिकर की धनराशि दी जायेगी । प्राईवेट, सार्वजनिक संस्थानों (धर्मशाला, स्कूल, कार्यालय) इत्यादि के भवनों के लिए अनुग्रह अनुदान राशि भवनों के अनुसार ही दी जानी है । इसके लिए निम्न व अधिकतम सीमा लागू नहीं होगी ।

टिहरी नगर व गांव के भू-स्वामियों को निजी भूमि का प्रतिकर पांच रुपया प्रति वर्गगज की दर से दिया जायेगा । निजी भूमि का प्रतिकर भूमि अध्याप्ति नियमों के अनुसार दिया गया है अथवा दिया जाना है । भू-स्वामी यदि भूमि के बदले भूमि चाहते हैं तो उनको जितनी भूमि उनके पास थी, उसी के बराबर वन-भूमि देहरादून जिले में कृषि योग्य बना कर दी जा रही है । किसी भी परिवार को दो एकड़ से कम और साढ़े बारह एकड़ से अधिक भूमि नहीं मिलेगी । ग्रामीण क्षेत्र में भूमिहीन कृषि श्रमिक परिवारों को भी दो एकड़ भूमि प्रति परिवार दिया जाना निश्चित किया गया है । प्रत्येक विस्थापित परिवार को अपना सामान, पशु इत्यादि को अपने नये निवास पर ले जाने के लिए विस्थापित अनुदान भी दिया गया है, जो परिवार भूमि के बदले भूमि लेकर पुनर्वास स्थल पर बसे हैं, उन्हें कृषि कार्य आरम्भ करने हेतु भी आर्थिक सहायता प्रति परिवार दी जा रही है । नये पुनर्वास स्थलों पर स्कूल, डाकघर, अस्पताल इत्यादि भी बनाये जायेंगे । पेयजल एवं सिंचाई की सुविधा प्रदान करने की व्यवस्था की बातें भी की जा रही हैं ।

टिहरी बांध परियोजना के कारण विस्थापित टिहरी नगरवासी व ग्रामवासियों में से अधिकांश विस्थापितों को पुनर्वास प्रस्तावित अथवा प्रदान की जा चुकी है व शेष जो पुनर्वास सुविधा से अभी तक वंचित हैं, उन्हें पुनर्वास सुविधा शीघ्र ही देने के पूर्ण प्रयास जारी हैं ।

टिहरी बांध परियोजना के अन्तर्गत विस्थापितों में से अधिकांश परिवार शासन से मुआवजा भी ले चुके हैं। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आज आमरण अनशन पर बैठने वाले विगत दशक में चुप क्यों थे, तथा अचानक ही इनका प्रकृति प्रेम ज्वार की तरह क्यों बढ़ने लगा । इसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा बनाने की चेष्टा करना देश के उस

प्रबुद्ध वैज्ञानिक तथा तकनीकीवर्ग के साथ अन्याय होगा, जिसने लगभग एक दशक के समय में अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों तथा उपलब्ध ज्ञानविज्ञान का भरपूर उपयोग करते हुए योजना का ब्लू-प्रिन्ट तैयार किया और इसे सम्पूर्ण सफलता की ओर ले जाने के लिए कटिबद्ध हैं। दूसरी ओर आन्दोलनकर्त्ताओं का प्रायः तकनीकि पृष्ठभूमि नहीं रही है। सामाजिक कार्यकर्ता, पर्यावरणजिज्ञासु, पर्यावरणप्रेमी तथा समाज के राष्ट्रीय हितों को लेकर जन-जागरण करना, तथा सरकार और जनता के बीच विकास कार्यों में अपनी सूझबूझ तथा अनुभवो के आधार पर सम्पर्क कायम करके विकास को एक सही दिशा देने का प्रयास करना एक नितान्त ही अलग क्षेत्र है तथा तकनीकि वैज्ञानिक एवं आर्थिक मसलों में वैचारिक मतभेद पैदा करना एक दूसरा ही क्षेत्र है। क्या हम यह मान लें कि बांधविरोधी पर्यावरणप्रेमीजन हमारी सरकार के उस वैज्ञानिकवर्ग से अधिक ज्ञान सम्पन्न हैं, जिसने टिहरी बांध योजना के ब्लू-प्रिन्ट तैयार किए होंगे ? सरकार बिना सोचे समझे करोड़ों लोगों के भविष्य को अनदेखा कर कोई विकास योजना बनायेगी, यह विचार ही हास्यास्पद है। बांध की वजह से जितनी भी भूमि तथा वन जलमग्न होने जा रहे हैं, वह पैदा की जाने वाली उर्जा के सापेक्ष नगण्य हैं, सत्य तो यह है कि उस क्षेत्र में वन नाममात्र को ही हैं। योजना विरोधी कई प्रबुद्धजन प्रायः सरकार की वन नीति तथा यूकेलिप्टस रोपण अभियान का मुखर विरोध करते रहे हैं, लेकिन उनके पास उन योजनाओं का कोई विकल्प कभी नहीं रहा है। अतः पर्यावरण तथा विस्थापन का हौवा खड़ा कर एक समृद्धिशाली योजना को– जिसे आज से ५–६ वर्ष पूर्व ही पूर्ण हो जाना चाहिए था—अब और अधिक समय के लिए टालना—हमारी दृष्टि से एक बड़ी भूल और अदूरदर्शिता ही होगी।

टिहरी बांध परियोजना विवादास्पद क्यों ?

योजनान्तर्गत आज जब बांध निर्माण का लगभग आधा कार्य हो चुका है, तब भी विवाद उत्पन्न किए जा रहे हैं कि टिहरी में इतनी अधिक ऊंचाई वाला बांध बनना चाहिए या नहीं। मतभेद केवल वैज्ञानिकों, इंजीनियरों, पर्यावरण वैज्ञानिकों व राजनैतिक व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि आम जनता में भी सम्पूर्ण तथ्यों के अभाव में विवाद है, कुछ का कहना है कि बांध बनना चाहिए, यदि विकास करना है और कुछ का कहना है कि बांध बनने से यदि किसी कारण–वश कुछ दुर्घटना होती है तो सम्पूर्ण गंगाघाटी का विनाश सुनिश्चित है। इसी विवाद के कारण स्वयं टिहरी की जनता भी दो गुटों में बंट गयी है। एक खेमा बाँध बनाये जाने का समर्थन करता है तो दूसरा खेमा इसका विरोध करता है। लेकिन दुर्घटना कहीं भी घट सकती है, प्राकृतिक प्रकोप दिल्ली में भी हो सकता है। युद्धकाल में राष्ट्र की कोई भी सम्पदा सुरक्षित नहीं कहीं जा सकती।

टिहरी बांध का विरोध सम्भवतः सर्वप्रथम सन् १९६५ में सामने आया जब यह कहा गया कि—यदि टिहरी बांध का निर्माण होता है तो टिहरी का राजमहल व संस्कृति जलमग्न हो जायेगी और ऐसे विकास कार्य जो हमारी संस्कृति पर आघात हैं, नहीं अपनायें। इसके पश्चात् सन् १९६८ में श्री विद्यासागर नौटियाल की अध्यक्षता में श्री रामेश्वरनन्द सकलानी व श्री चन्द्रसिंह असवाल ने टिहरी बांध का विरोध किया। सन् १९८५ में टिहरी बांध विरोधी संघर्ष समिति ने सर्वोच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की जो अभी तक विचाराधीन है। टिहरी बांध परियोजना के विरोध का समर्थन बाबा आम्टे, स्वामी अग्निवेश, बाबा नागार्जुन व पर्यावरणप्रेमी प्रसिद्ध चिपको नेता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा सरीखे प्रबुद्ध एवं जाने-माने समाजसेवी लोग कर रहे हैं।

दिसम्बर १९८९ तथा जनवरी १९९० में श्री सुन्दरलाल बहुगुणा, टिहरी बाँध के निर्माण को रोकने की माँग को लेकर अनशन पर बैठे। लेखक का अपना विचार है कि इस प्रकार का विरोध विकास के पक्ष में दुर्भाग्यपूर्ण अवरोधी घटना ही है। केन्द्रीय पर्यावरण व वन मंत्री मेनका गाँधी व राज्य सरकारों की अपील का श्री बहुगुणा के आमरण अनशन पर कोई असर नहीं हुआ और तब सरकार ने बाँध निर्माण में अस्थायी रोक लगाकर श्री बहुगुणा को बातचीत के लिए दिल्ली आमन्त्रित किया। और अब समस्त प्रकरण एक उच्च समिति को सौंपा हुआ है। राजनैतिक दल दो भागों में बंट गये हैं बाद में पुर्नविचार के उपरान्त बांध निर्माण कार्य पुनः चालू कर दिया गया, यही उचित था।

टिहरी की आम जनता को कई परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि सरकार व नगर प्रशासन का ध्यान पूरी तरह से बाँध की ओर केन्द्रित है तथा इस कारण से नगर में नागरिक सुविधाओं, शिक्षा व अस्पताल आदि में कोई व्यय नहीं किया जा रहा है। जहां टिहरी जी जनता स्वस्थ वातावरण में जीने की आदी रही है, वहां पर उन्हें आजकल धूल भरी हवा व गाद भरे पानी का उपभोग करना पड़ रहा है।

सन् १९८१ में बाँध की स्थिरता का अध्ययन वाडिया इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन जियालोजी, देहरादून को सौंपा गया था। इस्टीट्यूट की रिपोर्ट के अनुसार टिहरी का यह क्षेत्र इतने विशाल बांध के लिए उपयुक्त नहीं है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि भयंकर भूस्खलन होने का खतरा हर समय बना रहेगा। रिपोर्ट के अनुसार जिस बाँध की उम्र १०० साल से अधिक बतायी जा रही है, वस्तुतः ३०—४० वर्ष से अधिक नहीं होगी। वह भी तब जब भूस्खलन न हो। क्योंकि पूर्वानुमान में यह कहा गया था कि बाँध में गाद (सिल्ट) भरने की वार्षिक दर ८१,३०० क्यूबिक मीटर थी, जो कि अब इंस्टीट्यूट द्वारा संशोधित गणना के अनुसार १,५४,९०० क्यूबिक मीटर अर्थात् दुगनी हो गयी है। परियोजना निर्माण क्षेत्र में पिछले ८० वर्षों में लगभग

३७ बार हल्के भूकम्प आ चुके हैं। अगर इन तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित किया जाये तो निश्चित ही इस बाँध से होने वाले लाभों पर प्रश्नचिन्ह लग जाते हैं कि विकास की कितनी कीमत चुकानी पड़ सकती है।

दूसरी ओर परियोजना से सम्बद्ध सोवियत संघ के प्रमुख विशेषज्ञ श्री डेवीडोव ने एक प्रेस विज्ञप्ति में बताया कि बाँध निर्माण की सम्पूर्ण प्रक्रिया का निर्णय, उसकी मजबूती और विश्वसनीयता, भूकम्प के प्रभाव, और गाद भरने की दर व परिस्थितियों, निर्माण की लागत तथा पर्यावरण की संवेदनशीलता जैसे मुद्दों का पूरा ख्याल रख कर ही लिया गया है। परियोजना के चीफ डिजाईनर तथा रुड़की में टिहरी हाईड्रो डैवलपमेन्ट कारपोरेशन लिमिटेड के कार्यकारी निदेशक श्री बी० एल० जटाना का कहना है कि बाँध की अक्षुण्णता की न्यूनतम अवधि १०० साल होगी, जबकि जलग्रहण क्षेत्रों में निरन्तर सुधार से यह अवधि १६० साल तक हो सकेगी।

यदि टिहरी बाँध की तुलना हिमालय पर्वत की पश्चिमी शृंखलाओं में बने बाँधों से करें तो स्थिति स्पष्ट होती है जो निम्न प्रकार से है :—

क्र सं. बाँध का नाम	ऊंचाई (मी.)	जल संचयन क्षमता (मिलियन क्यू.मीटर)	जलाशय क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी)
१—तारबेला (पाकिस्तान)	१४३.००	१३६६०.००	२८०.००
२—भागंला (पाकिस्तान)	१३८.००	७२५ ००	१६०.००
३—भाखड़ा (हि० प्र०)	२२६.००	९६२१.००	१६६.००
४—व्यास (हि० प्र०)	१३३.००	८५७०.००	२६०.००
५—पन्डोह (हि० प्र०)	७६.००	४१ ००	१.६५
६—रामगंगा (उ० प्र०)	१२८.००	२४४२.००	७८.००
७—टिहरी (उ० प्र०) निर्माणाधीन	२६०.५०	३५४०.००	४२.००
८—थीन (पंजाब) निर्माणाधीन	१६०.००	३२८०.००	३७.६

प्रथम छः बाँध, टिहरी जैसी पहाड़ियों पर ही बनाये गये हैं, व अपने-अपने क्षेत्र के विकास करने मे खरे उतरे हैं। जैसे कि कहा जा रहा है कि टिहरी बाँध बनने से पहाड़ों में रेगिस्तान बन जायेगा, यह तथ्य बिल्कुल गलत साबित है। क्योंकि जहां भी थे बाँध बने हैं, वहां पर ऐसी सम्भावना के लेशमात्र भी चिन्ह नहीं हैं।

बाँध निर्माण से सम्बन्धित अधिकारियों के अनुसार यदि अब बाँध का निर्माण कार्य बंद किया जाता है तो इस पर हुआ लगभग ५०० करोड़ रुपया तो व्यर्थ जायेगा ही बल्कि सभी कार्यों एवं अनुबन्धनों को बन्द करने के लिए १०० करोड़ रुपये और व्यय करने पड़ेंगे तथा स्थानीय जनता को वहुत विषमताओं का सामना करना पड़ सकता है। अतः टिहरी बांध निर्माण का विरोध अब इस स्थिति में करना बिल्कुल उचित नहीं है।

जहां तक भूकम्प से बाँध को खतरे की बात है तो बाँध निर्माण का तकनीकि ज्ञान अब इतनी उन्नति कर चुका है कि किसी भी भूकम्प के झटके झेलने योग्य ऊंचा से ऊंचा वाँध बनाया जा सकता है। विभिन्न देशों में अत्यधिक भूकम्पीय क्षेत्र में पहले भी कई विशाल बांध बनाये जा चुके हैं, जो कि सही कार्य कर रहे हैं। ये विशाल बाँध जो कि भूकम्पीय क्षेत्र में बनाये गये हैं, इस प्रकार से हैं :—

क्र सं.	बाँध का नाम	देश	ऊंचाई (मी०)	रिक्टर स्केल पर भूकम्पीय संवेदनशीलता
१—	रमून	रूस	३३५.००	९
२—	न्यूरेक	रूस	३००.००	९
३—	ओरोविले	अमेरिका	२३२.००	७
४—	आयावाकिक	टर्की	१७५.००	८
५—	चिकासिन	मैक्सिको	२६४ ००	७
६—	केवन	टर्की	२०७.००	७
७—	तारबेल	पाकिस्तान	१४५.००	९
८—	होंडा	बैनिजुएला	१३०.००	११
९—	मैंवोरो	जापान	१३१.००	१०
१०—	भाखड़ा	भारत	२२६.००	७
११—	टिहरी (निर्माणाधीन)	भारत	२६०.००	९

विश्व में उपरोक्त सभी ११ विशाल बाँध भूकम्पीय क्षेत्रों के अन्तर्गत ही बनाये हुए हैं, व अभी तक किसी भी बाँध को भूकम्पीय परिकम्पन के कारण क्षति नहीं पहुंची है और जिन बाँधों को भूकम्पीय परिकम्पन के कारण नुकसान हुआ है वें या तो उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में या फिर वीसवीं शताब्दी के आरम्भ में ही क्षतिग्रस्त हुए। जब

बाँध निर्माण का तकनीकि ज्ञान अविकसित था तथा बाँध शहरों की जलपूर्ति के लिए छोटे-छोटे अभियन्ताओं द्वारा निर्मित किए जाते थे। सरकार द्वारा उपलब्ध सूचनाओं के अनुसार टिहरी बाँध के विकास में अब भारतवर्ष के सभी सम्बन्धित संस्थाओं के विशेषज्ञों की राय ली गयी है, जो अपने क्षेत्र में अद्वितीय हैं। टिहरी बाँध का डिजाईन पूर्ण रूप से सुरक्षित कहा जा रहा है।

टिहरी बाँध परियोजना का हल केवल वैज्ञानिक व इंजीनियर्स ही सही-सही बता सकते हैं। अतः समाजसेवी संस्थाओं व राजनैतिक दलों को इस विषय में अपनी काल्पनिक तकनीकि राय देने का कोई औचित्य स्पष्ट नहीं होता। अतः हमें इस तथ्य को स्वीकार करके ही चलना चाहिए कि इसके बारे में वैज्ञानिकों व इंजीनियरों से बेहतर कोई नहीं सोच सकता और न ही सही फैसला दे सकता है। अतः विवाद को पूर्ण रूप से विशेषज्ञों पर ही छोड़ देना उचित है। वरना स्थिति सुधरने के बजाये बिगड़ सकती है। क्योंकि जलूस निकालने से, भूख–हड़ताल करने से, अनशन करने से किसी तकनीकी समस्या का हल नहीं खोजा जा सकता।

परियोजना के उपेक्षित आयाम :—

इस प्रकार की किसी भी विशाल परियोजना के बनने पर स्थानीय पर्यावरण में उथल–पुथल होना, कई महत्वपूर्ण बिन्दुओं का उपेक्षित होना तथा स्थानीय जनता की विस्थापन एवं जन्मभूमि वियोग के दुःख झेलना, अपरिहार्य हो जाता है। तब भी सामान्य दृष्टि से जिन तथ्यों के प्रति सचेतन रहने की अपेक्षा की जाती है, ऐसे कई तथ्यों को या तो नजरअन्दाज कर दिया गया है, अथवा उन पर अभी अपेक्षित कार्यवाही होनी शेष है, इस दृष्टि से निम्न तथ्य विचारणीय हो जाते हैं : —

(१) टिहरी बाँध स्थल सेस्मिक क्षेत्र में आता है, इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता, परन्तु बाँध की ऊंचाई तथा बाँध के 'रौक फिल' बन्धन के पारस्परिक अनुपात को सुदृढ़ करने हेतु क्या सावधानियाँ बर्ती गयी हैं, यह स्पष्ट नहीं है।

(२) भागीरथी का ऊपरी जलागम क्षेत्र अत्याधिक भू–क्षरण का क्षेत्र है अतः सिल्टेशन को रोकने, बाँध में गाद भरने की दर को काम करने और बाँध की अपेक्षित आयु को बढ़ाने में छोटे-छोटे अवरोधक बन्धों का ऊपरी जलागम क्षेत्र की समस्त सहयोग छोटी-छोटी पहाड़ी नदियों पर बनना आवश्यक होगा, परियोजना में इसकी व्यवस्था स्पष्ट नहीं है अथवा इसका प्रावधान ही नहीं है ? जो भी हो, यह एक अत्यन्त गम्भीर संरचना होगी। अब और भी ज्यादा क्योंकि आने वाले वर्षों में इस

क्षेत्र में सरकारी सद्प्रयासों के बावजूद और भी अधिक वन कटाव को रोका नहीं जा सकेगा। अतः भू–क्षरण की गति बढ़ेगी, विकास कार्यों हेतु भू–खनन बढ़ रहा है, तथा टूरिज्म भी बढ़ रहा है।

(३) इस क्षेत्र में नदियों में मछलियों के आवागमन में ऐसे बंध एक बाधा हैं, पहले ही हिमालय क्षेत्र से 'माहसेर' सरीखी मछली की श्रेष्ठतम किस्म लुप्त होने की स्थिति में पहुंच चुकी है, अब यह समस्या और भी गम्भीर हो जायेगी, क्योंकि मत्स्य भ्रमण पथों का इस बांध शृंखला में कोई स्थान नहीं है। हाँ बाँध से तो मत्स्य पालन उद्योग की बहुत अधिक उत्पादन की क्षमता है, पर भागीरथी के निचले क्षेत्र से 'माहसेर' सरीखी मछलियों का हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाना निश्चित हो जायेगा।

(४) टिहरी बाँध क्षेत्र में किसी प्रकार की भू–स्थलीय विकृति पैदा होने पर या दुर्घटनावश बाँध के टूटने पर मैदानी क्षेत्रों में जो तबाही हो सकती है उसके बचाव के लिए स्थान-स्थान पर अवरोधक बनाने होंगे, चैक डैम, की तरह ही तथा निचली घाटियों में जलप्रवाह में दिशापरिवर्तन की स्थितियाँ भी पैदा करनी होंगी।

(५) समस्त ऊपरी तथा निचले क्षेत्र में स्थानिक प्रजातियों का विशाल वृक्षारोपण होना आवश्यक है। इस विषय में मौखिक आश्वासनों के अतिरिक्त अभी तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया है।

टिहरी बाँध परियोजना से लाभ :—

टिहरी बाँध परियोजना एक ब्रहुउद्देशीय विशाल जल–विद्युत ऊर्जा शक्तिवाली परियोजना है, जिससे निम्नलिखित लाभ होंगे :—

१—टिहरी बाँध परियोजना से ३५६.७० करोढ़ यूनिट वार्षिक विद्युत उत्पादन होगा। इस तरह से प्रदेश में विद्युत की पूर्ति होगी व उद्योग स्थापित करने में सहायता होगी। जिसका फायदा बेरोजगारों को होगा। ३५६.७० करोड़ यूनिट में करीब १५०० उद्योग लग सकते हैं तथा उद्योगों में लगभग ४० लाख बेरोजगारों को रोजगार की सुविधा उपलब्ध हो सकती है। उत्तराखण्ड के अधिकांश क्षेत्रों में गांव-गांव में बिजली उपलब्ध करायी जा सकेगी। तथा स्वरोजगार के लिए बेरोजगारों को कुटीर उद्योगों के लिए विद्युत सुलभ की जा सकेगी।

२—टिहरी बाँध के बनने से २.७ लाख हैक्टेयर भूमि सिंचित हो सकेगी, जिससे देश में अतिरिक्त अनाज का उत्पादन कर निर्यात किया जा सकता है। तथा देश खाद्य पदार्थों व अनाज में आत्मनिर्भर होगा।

३—बाँध वन जाने के कारण क्षेत्र में पर्यटन स्थल बना कर क्षेत्र का विकास किया जाना है, जिससे राज्य सरकार व केन्द्र सरकार दोनों ही लाभान्वित होंगे। पर्यटन स्थल बनने से उत्तराखण्ड की संस्कृति और उभर कर सामने लायी जा सकती है।

४—टिहरी बाँध बनने के बाद लुप्त होती मत्स्य प्रजातियों की सुरक्षा को विकसित किया जायेगा, मतस्य पालन के लिए २.८७ लाख एकड़ फीट पानी उपलब्ध कराया जा सकेगा।

५—टिहरी बाँध बन जाने से विद्युत संचालित 'रोप वे' गंगोत्री, जमनोत्री, बद्रीनाथ, केदारनाथ व फूलों की घाटी के लिए बनायी जा सकती है, जिससे यात्रियों को बहुत सुविधा होगी तथा यात्रा करने में पैसा भी बचेगा और समय भी, और इससे पर्वतीय जनता की अर्थव्यवस्था भी सुधरेगी।

६—विद्युत उत्पादन बढ़ने से क्षेत्र के लकड़ी उद्योग को भी फायदा होगा, जो लकड़ियां (चीड़, देवदार, साल, सागौन, खैर, तून आदि) पहाड़ों से कट कर मैदानों में आती थी तथा वहां से बनकर सामान वापिस पहाड़ों में बिकता था, बांध बन जाने के बाद उद्योग लगाकर माल यहीं पर तैयार किया जा सकेगा।

७—ऊपरी गंगनहर, निचली गंगनहर एवं आगरा नहर के द्वारा पानी की कमी पूर्ण होगी तथा सिंचाई व पेयजल की समस्या का भी समाधान होगा।

८ गंग नहर पर बने आठ छोटे-छोटे विद्युतग्रहों से टिहरी बांध बनने के बाद विद्युत उत्पादन पहले से दुगना किया जा सकेगा।

९—मानसून में नदियों के कारण जो बाढ़ का खतरा प्रतिवर्ष पहाड़ों की तराई क्षेत्रों में तथा मैदानों में बना रहता था, अब टिहरी बाँध बन जाने से इससे मुक्ति मिल सकेगी।

१०—पहाड़ की महिलाएं अपनी ईंधन की आवश्यकता के लिए सदियों से जंगल पर आश्रित रही हैं। चूल्हा फूंकने से स्वास्थ्य के दुष्परिणाम सर्वविदित ही हैं, यदि पूर्ण विद्युतीकरण और उत्पादक मूल्य पर पहाड़ों में बिजली उपलब्ध हो तो पर्वतीय नारी चूल्हे को छोड़कर आधुनिक उपकरणों से रसोई का काम निपटा सकेगी। इससे ईंधन के लिए वनों पर आश्रित भी नहीं होना पड़ेगा व वन सम्पदा बची रहेगी तथा वायु प्रदूषण में भी कमी आयेगी।

११—टिहरी बाँध परियोजना के अन्तर्गत ४२ वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में बन रहे जलाशय से कई लाभ हैं। जलाशय बनने के बाद निचले इलाकों की भूमि के

भीतर (परक्यूलेशन) पानी का दवाव ऊपर उठता है, जिसले स्वतः ही आस-पास की भूमि सिंचित हो जाती है। शिवालिक पहाड़ियों और विशेषकर दून घाटी के आसपास के प्राकृतिक पानी के स्रोत जो अब बन्द हो गये हैं उनमें भी पानी आने की सम्भावना से इंकार नहीं किया जा सकता। साथ-साथ पश्चिमी उत्तरप्रदेश के मैदानी भागों में भूमि से निकलने वाले पानी का जलस्तर १० से १२ फीट तक बढ़ने की सम्भावना है।

१२– बरसात में गंगानदी पहाड़ों को काट कर मिट्टी वहाकर नदियों के मुहाने पर दोआब बनाती है, जिससे नदियों का स्तर ऊंचा उठ जाता है व इसका असर नदी के वेग (वैलोसिटी; पर पड़ता है। वेग कम होने से भी बाढ़ के खतरे अधिक हो जाते हैं। टिहरी बाँध इन सब खतरों पर नियंत्रण करा सकेगा।

११—पर्वतों से रोजगार के लिए जो पलायन होता रहा है, वह टिहरी बाँध बन जाने से काफी हद तक रुकेगा, क्योंकि कई उद्योग लगाये जा सकेगें, जिसमें स्थानीय लोगों को सर्वप्रथम रोजगार दिया जायेगा। तथा शिक्षित वेरोजगार भी कुटीर उद्योग धन्धे लगा कर अपनी अर्थव्यवस्था सुधार सकेंगे। टिहरी बाँध बन जाने के बाद लगभग ४०–४५ लाख बेरोजगार युवकों को रोजगार मिल सकेगा, जिससे देश की बेरोजगारी समस्या को हल करने में काफी मदद मिलेगी।

अन्त में, केवल इतना कि टिहरी बाँध के निर्माण में पहले ही बहुत देर हो चुकी है, जिसकी वजह से योजना का व्यय क्षमता के बाहर हो गया और विकास की गति रुकी हुई है। इस योजना की सही व्यवस्था से न केवल पर्यावरण, सुरक्षा, संवर्द्धन तथा विकास के आयाम बढ़ेंगे, अपितु समस्त क्षेत्र में आर्थिक विकास के नये आयाम भी पोषित होंगे। काल्पनिक खतरों के भय से तथा राजनीति प्रेरित विरोध के दबाव में आकर योजना में ढील देना अथवा अब उस पर पुनर्विचार करना उचित प्रतीत नहीं होता। छोटे-छोटे 'डाम' बनाकर विद्युत उत्पादन तथा सिंचाई की योजनाऐं बनाना निश्चय ही अधिक सुरक्षात्मक एवं सरल उपाय होता, उसमें संभवतः इतना विस्थापन तथा पर्यावरणक्षरण एवं आर्थिक व्यय भी न होता और पर्यावरण विकाश के आयामों में वृद्धि होती लेकिन अब जवकि स्थानीय जनमानस विस्थापन हेतु एक मनोवैज्ञानिक वातावरण बना चुका है, स्थानीय पर्यावरण में विकृति पैदा की जा चुकी है, नया टिहरी निर्मित किया जा चुका है तो एक अनिश्चित भविष्य को भयावह विकृतियों के संदेह में लाकर विकास की विशालतम योजना में अवरोध पैदा करना, अपूरणीय राष्ट्रीय क्षति ही होगी। हम सभी पर्यावरण ही नहीं सम्पूर्ण प्रकृति के पुजारी है पर करोड़ों लोगों के आर्थिक विकास से सम्बद्ध योजना हेतु कहीं पर किसी न किसी को त्याग करना ही होगा—वह त्याग भी एक अत्यंत समर्थ एवं पवित्र सहयोग है।

———

गंगा-हिमालय पर्यावरण :

बड़े बाँध-दुष्परिणाम

टिहरी का विरोध क्यों ?

—वि० शंकर
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

बड़े बाँध बनाने की बुद्धिमता के वारे मैं गम्भीर संदेह है। इस लेख मैं बड़े बाँध बनाने से होने वाले पर्याववण असन्तुलन, भूमि-अपरदन, बाढ़, सिल्टेशन में वृद्धि जंगलों की सफाई और उससे होने वाले गम्भीरपरिणामों को स्पष्ट किया गया है। ऊर्जा और सिंचाई के लिए छोटे बाँध और सौयं ऊर्जा की सिफारिश को गई है जो बड़े बाँधो का विकल्प बन सकते हैं और हमें पर्यावरण अपकर्ण से बचा सकते हैं। भारत एक गर्म देश है यहां धूप की कमी नही है। फिर हम इसका पूर्ण लाभ क्यों नहीं उठा पा रहे है। हमें अन्य देशों की हर बात में नकल करने की क्या आवश्यकता है। हमारे पास पहले ही वन क्षेत्र कम हैं अपरदन की दर अधिक है फिर हम ऐसी योजनायें क्यों चालू करें जिनसे वन-क्षेत्र और अधिक कम होते जावे और अपरदन में वृद्धि हो। हम अपनी मूल्यवान प्राकृतिन निधि का जी जान से संरक्षण करें न कि विनाश।

भारत एक ऐसा देश है जहां भूमि के एक बड़े क्षेत्र में वाढ़ आती है और इससे भी बड़े क्षेत्र सूखे के प्रकोप का भाजन वनते हैं। किसी भी नदी के बेसिन में किसी भी प्रकार का विकास कार्य हाथ में लेते समय निम्नलिखित तथ्य दृष्टि में रहने चाहियें :

१—भारत की भूमि का क्षेत्र विश्व का २.४% है जबकि मिट्टी की हानि विश्व की १८.५% है।

२—विश्व के अनेक भागों में गहरे जलाशय सेस्मिक एक्टिविटी बढ़ाते हैं।

३—कोई भी आर्थिक विकास तब ही चल सकेगा जब वह पर्यावरण की दृष्टि से स्वस्थ होगा।

४—अपनी भूमि सम्पदा को दीर्घकालीन दृष्टि में देखना चाहिये न कि अल्प-कालीन।

५—अच्छा पर्यावरण-प्रबन्ध वह होता है जिससे प्रदूषण न हो, अपरदन न हो और सम्पदा की ऐसी हानि न हो जो पूरी ही न हो सके।

६—जिन देशों के वनक्षेत्र पहले से ही कम हैं और आगे भी कम होते जा रहे हों, और भारत उनम से एक है, वहां ऐसी कोई विकास योजना नहीं बनानी चाहियें जिससे बड़े पैमाने पर जंगल साफ करने पड़ें।

सेस्मिक जोन, जलाशय और भूकम्प

वर्तमान में बड़े बांधों में अत्यन्त विवादास्पद टिहरी बांध (२६०.५ मी. ऊंचाई) ने अनेक लोगों का ध्यान आकर्षित किया है। यह इसलिये कि बांध विश्व के सबसे बड़े बांधों में आता है और पर्यावरण की दृष्टि से स्वस्थ नहीं है। साथ ही बांध सैस्मिक जोन में बनाया जा रहा है। बांधके जलाशय में जो २.६२ मिलियन एकड फीट जलएकत्रित किया जायेगा उसका भार ३.२ बिलियन टन होगा जो जलाशय पर पड़ेगा जिससे भूकम्प आने को आशंका है। बांधके क्षेत्र में Thrusts, Shear zones, Faults है। उपरोक्त सब बातों के कारण भूकम्प आने और बांध के टूटने की आशंका बनी हुई है। आंकड़ बताते हैं कि जलाशय में जल की ऊँचाई और भूकम्प में निश्चित सम्बन्ध है जिन जलाशयों की ऊँचाई १५०–२५० मी० थी उनमें ३०% से भूकम्प आये (हर्ष गुप्ता १९८९) बांध टूटने से गंगा का जल २०० फीट ऊँचा होकर बहेगा। ऋषिकेश हरिद्वार का तो अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा, सम्पूर्ण गंगा बेसिन तहस-नहस हो जायेगा। यह खतरा इतना बड़ा है कि इसके सामने बांध से होने वाले लाभ, विद्युत उत्पादन (अनुमानित ३५६.७० करोड़ यूनिट) एवं सिंचाई सुविधायें (२७ लाख है० भूमि) नगण्य हो जाती है। विद्युत उत्पादन और सिचाई सुविधायें छोटे-२ बांधों से भी प्राप्त हो सकती हैं जिनमें उपरलिखित खतरे नहीं हैं। अतः अनेक विचारशील लोगों का मत है कि टिहरी बाँध का बनाना बुद्धिमत्ता नहीं है। हमें अपनी प्राकृतिक निधि को इस तरह नष्ट करने और भूकम्प का खतरा मोल लेने का कोई हक नहीं है।

एक मत यह भी है कि जलाशय में एकत्रित जल प्रदूषित हो जाता है। अतः यदि गंगा जल की अद्‌भुत क्षमतायें नष्ट हो जाती हैं तब इसका उत्तरदायित्व किस पर होगा। कल बांध टूटने से यदि हरि की पौड़ी का अस्तित्व ही नहीं रहेगा तब वह लाखों करोड़ों लोग जिनकी आस्था का केन्द्र यह पौड़ी रही है उनकी क्या दशा होगी ? ये कुछ प्रश्न हैं जो प्रत्येक व्यक्ति के अन्तःकरण को झंझोड़ रहे हैं। जो स्वाभाविक हैं।

ऊर्जा और सिंचाई सुविधाओं के लिये जब सौर्य ऊर्जा और छोटे बांध हमारे सामने हैं तब हम बड़े बांध का जोखिम क्यों मोल ले रहे हैं।

सी०ए०जी० रिपोर्ट

भारत के कम्पट्रोलर एण्ड आडिटर जनरल की रिपोर्ट के अनुसार टिहरी बांध परियोजना आर्थिक दृष्टि से *Viable* नहीं है। साथ ही इससे क्षेत्र की इकोलोजी पर दुष्प्रभाव पड़ेगा। परियोजना के मूल्य के प्रत्येक पुनर्मूल्यांकन के साथ लागत : लाभ अनुपात (Cost-benefit ratio) गिरता चला गया है। रिपोर्ट में CAG ने जिआलाजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया का ब्योरा देते हुए लिखा है कि GSI के अध्ययन के अनुसार बांध स्थल (dam site) Thrusts, Shear zones, Faults से छलनी है। बांध का क्षेत्र सेस्मिक जोनिंग मैप ऑफ इण्डिया के जान IV में आता है जोकि एक्टिव है। बांध बनाने की बढ़ती हुई लागत, १९९६ तक ४००० करोड़ रुपये तक पहुंच जायेगी, जबकि इसके लाभ, लागत के अनुपात में, नहीं बढ़ेंगे।

परियोजना-स्थल के ८० से ३२० किमी. के त्रिज्या (रेडियस) में पिछले ८० वर्षों में ३६ भूकम्प आ चुके हैं।

बांध की चीन की सीमा से दूरी

विजय परंजपाए के अनुसार बांध-स्थल चीन की सीमा से केवल १०० किमी दूर स्थित है। अतः स्वाभाविक है कि भारत-चीन युद्ध होने पर यह बांध पहला निशाना होगा। बांध की इकानामिक लाइफ विद्युत उत्पादन को दृष्टि से ६२ वर्ष से अधिक नहीं होगी। बांध बनने से कृषि-उत्पादन में वृद्धि जोकि १५७ करोड़ रु० बताई जा रही है वह केवल ६५ करोड़ रु० प्रति वर्ष होगी। इस प्रकार परंजपाय के अनुसार बांध पर आने वाली लागत के अनुपात में बांध से जो लाभ प्राप्त होंगे वह बहुत कम होंगे।

पर्यावरण अपकर्ष

बड़े बांध बनाने में भूमि के एक बड़े क्षेत्र से वन काटने पड़ते हैं और उसके दुष्परिणाम भोगने पड़ते हैं जैसे भूमि अपरदन सिल्टेशन में वृद्धि, बाढ़ में वृद्धि, मूल्यवान वनस्पतियाँ जो हमारी प्राकृतिक निधि हैं उनका विनाश। ऐसो कोई भी विकास योजना जिसमें भूमि के एक बड़ क्षेत्र से वन काटे जाने पड़ें पर्यावरण की दृष्टि से कभी स्वस्थ नहीं हो सकती। और यदि ऐसी योजना गंगा–हिमालय क्षेत्र में बनाई जा रही हो तब तो स्थिति और भी भयावह हो जाती है। ये योजनायें आर्थिक दृष्टि से भी कितनी स्वस्थ होंगी इस पर भी प्रश्न चिन्ह है। जो जल, बिजली टिहरी बांध योजना से प्राप्त होंगे उनकी प्रति इकाई मूल्य क्या आयेगा यह भी सामने आना चाहिये। कितना लागत से कितना लाभ होगा इसका निश्चित अनुमान भी जनसाधारण को पता होना चाहिये।

भारत की संस्कृति गंगा-हिमालयकी संस्कृति है। भारत का इतिहास गंगा-हिमालय का इतिहास है। भारत का पर्यावरण गंगा-हिमालय का पर्यावरण है। वेदों के काल से हम अपने पर्वतों, वनों, जल के महत्त्व को समझते आये हैं। तब आज क्या हो गया हमको। क्यों हम वनों के, प्राकृतिक निधि के विनाश का कारण बन गये हैं? क्यों हम अपने ही हाथों से अपना गला घोंट रहे हैं।

"यस्याम् वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा।
पृथिवीं विश्वधापसं घृतामच्छा वदामसि" ॥ अथर्ववेद १२-१-२७

जिस भूमि में वृक्ष एवं वनस्पतियाँ सदा खड़ी रहती हैं वह भूमि विश्व के समस्त जनों का भरण पोषण करने में समर्थ होती है।

ऐसा लगता है कि वनों की रक्षा वास्तव में मनुष्य नहीं करता वह तो उसका विनाश एवं उपभोग ही करता है। इसका श्रेय तो वन्य जीवों को ही जाता है। "येत आरण्याःपशवो मृगा वने हिताः सिंहां व्याघ्रा पुरुषादश्चरन्ति। उलंवृकंपृथिवि दुच्छुनामित ऋक्षीकां रक्षो अपबाधयास्मत।" अथर्व० १२-२-४९। मनुष्यों को खा जाने वाले इन वन्य पशुओं के कारण मनुष्य इन वनों से दूर ही रहते हैं परिणामस्वरूप वन अपने स्वाभाविक रूप में विकसित होते हैं।

ऐसी विकास योजनाओं का कोई लाभ नहीं जो कल तो डबल रोटी मक्खन देने का वायदा करती हो किन्तु परसों जिनके कारण सूखी रोटी के भी लाले पड़ जाने का भय हो या रोटी खाने वालों का अस्तित्व ही खतरे की लपेट में आ जाय। क्या बड़े बांध, जिसमें टिहरी बांध भी आता है, ऐसी ही योजनाओं में आते हैं? और ऐसे बांध यदि भूकम्प की सम्भावना वाले क्षेत्र में बनाये जा रहे हों तब क्या कहा जायेगा। हमारे देश को ऊर्जा की आवश्यकता है। सिंचाई के लिये जल की आवश्यकता है किन्तु किस मूल्य पर? अपनी मूल्यवान विरासत, प्राकृतिक निधि को खोकर, दूर २ तक फैले हुए जंगलों को काट कर, भूमि अपरदन बढ़ा कर, बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र को बढ़ा कर, गंगा-जल को प्रदूषित करके? एक बड़े पैमाने पर लोगों को विस्थापित करके, उन्हें कष्ट देकर। फिर हम ऐसी योजनाओं को क्यों हाथ में लें जिनसे विनाश की सम्भावना भी प्रत्यक्ष हो। भारत में तो वन-क्षेत्र वैसे हीं कम है। बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र में वृद्धि हो रही है। फिर यह कहां की बुद्धिमत्ता है कि हम जान बूझकर अपने पर्यावणर को नष्ट कर अपनी मूल्यवान विरासत से हाथ धो बैठें। जाहिर है कि ऊर्जा के उत्पादन के लिये, सिंचाई के लिये हम ऐसी योजनाओं की ओर ध्यान दें जो पर्यावरण की दृष्टि से स्वस्थ हों। हमें सौर ऊर्जा और छोटे-२ बांधों की ओर ध्यान देना चाहिये। हमें अपने रहन-सहन के ढग बदलने चाहिये। सिंचाई मे जल की इकानामी, प्रत्येक क्षेत्र में ऊर्जा की इकानामी आवश्यक है।

हिमालय वाटर शेड :

वन क्षेत्र में कमी—बाढ़, सिल्टेशन, अपरदन में वृद्धि, भूकम्प सक्रिय :

प्रसिद्ध भू-वैज्ञानिक डा० जे० एस० कंवर (१६८१) के अनुसार बड़े बांध बनाने की बुद्धिमत्ता के बारे में गम्भीर संदेह है। इनके बनाने में न केवल बहुत अधिक व्यय होता है बल्कि हजारों हेक्टर भूमि से जंगल काटने पड़ते हैं। हमारे देश में १६५३-६० से बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र के बढ़ते जाने का एक महत्त्वपूर्ण कारण बड़े पैमाने पर जंगल काटना और वनस्पतियों का विनाश करना है।

पिछले ३० वर्षों में हिमालय वाटर शेड का वन क्षेत्र ४०%. कम हुआ है जिससे सिल्टेशन और बाढ में वृद्धि हुई है तथा ईंधन लकड़ी में कमी आई है (यू०एन०ई० पी०, हाशमी, हिन्नावी १६८७)।

अतः बड़ी योजनाओं की बात तो दूर है हमें हिमालय को छूते समय भी बहुत सावधानी बरतनी चाहिये। हिमालय केवल हमारी जलवायु को ही नियन्त्रित नही करता, उससे हमें अनेक प्रकार की प्राकृतिक सम्पदा प्राप्त होती है जिसमें से एक जीवनदायक जल है। हिमालय की नदियों में प्रति वर्ष ११ लाख मिलियन क्यूबिक मीटर जल बहता है। डा० वाल्दिया (१६८७) के अनुसार हिमालय में विद्यमान सैकड़ों Faults भूकम्प-सक्रिय हैं और बांधो में भूकम्प पैदा करने की पर्याप्त क्षमता होती है।

बड़े बांधों में अत्यधिक विवादास्पद टिहरी बांध के बारे में सुन्दर लाल बहुगुणा (१६८७) का विचार है कि, "टिहरी बांध का बनना बीसवीं सदी की सबसे बड़ी मूर्खता होगी।"

जिस स्थान पर बांध बन रहा है वहां भूकम्प का खतरा है जिससे यदि बांध टूटता है तब दूर २ तक विनाश ही नजर आयेगा। एक अनुमान के अनुसार इस क्षेत्र में भूकम्प आने से, बांध के टूटने से २०० फीट ऊंची बाढ़ गंगा में आयेगी। इससे विनाश का अनुमान लगाया जा सकता है। हम हरिद्वार ऋषिकेश में रहने वालों का क्या हाल होगा। क्या पवित्र हरि की पैड़ी जो लाखों करोड़ों लोगों की आस्था की केन्द्र बिन्दु है, बच सकेगी? ऐसा लगता

है कि हम बात विरासत की, पर्यावरण सुरक्षा की करते हैं और काम इनके विपरीत । एक अनुमान के अनुसार बाँध बनाने से प्रायः ४६०० हे० भूमि (१००० हे० जंगल, १६०० हे० कृषियोग्य भूमि एवं २००० हे० चारागाह आदि) से हाथ धोना पड़ेगा । इस क्षेत्र में होने वाले बहुमूल्य औषधीय पौधे भी नष्ट हो जायेंगे । इस प्रकार राष्ट्र से उसका अत्यन्त मूल्यवान धन बांध के कारण उससे छीन लिया जायेगा । यहां यह उल्लेखनीय है कि चरक के अनुसार हिमालय में पैदा होने वाली जड़ी बूटियां रोगों के उपचार, लम्बी आयु और उत्तम स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं । हिमालय क्षेत्र में बांध बनने से वन सम्पदा को जो धक्का लगेगा वह अत्यन्त गहरा होगा । जबकि अनेक विकसित देशों में वन क्षेत्र स्थिर हो रहे हैं और कहीं-२ उनमें वृद्धि भी हुई है विकासशील देशों में वन क्षेत्र इस सदी में प्रायः आधे रह गये हैं । डा० खुशू के अनुसार भारत में पहाड़ी क्षेत्र में ६०% वन होने चाहिए और मैदानों में ३०% जबकि वास्तविक वन क्षेत्र वर्तमान में १४% है । किसी भी बड़े बाँध बनने से यह स्थिति और भयावह होती जाती हैं । इस बात की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है कि जंगलों की कटाई से अपरदन सिल्टेशन एवं बाढ़ में वृद्धि होती हैं । ऐसा अनुमान है (कंवर १९८१) कि भारत में १९५२ से बाद बाँध बनने में प्रायः ४ लाख है० भूमि से जंगलों का सफाया करना पड़ा और इसी अवधि में बाढ़ग्रस्त क्षेत्र में वृद्धि हुई । १९५० में बाढ़ग्रस्त क्षेत्र २५ मिलियन है० था जो बढ़ कर ४० मिलियन है० हो गया (National Commission of Floods) । प्रसिद्ध भूमि-वैज्ञानिक डा० कंवर के अनुसार भूमि अधिक से अधिक पानी सोख सकें इसके लिए राष्ट्रव्यापी प्रयत्न की आवश्यकता है । साथ ही बचे हुए पानी को छोटे-२ रिजरवाइर एवं टैंकों में इकट्ठा किया जाना चाहिए । वन काटने की प्रक्रिया से जो कि बड़े बाँध बनाने के लिए आवश्यक होती है, भूमि की जल सोखने की क्षमता घटती चली जाती है जिसके कारण नदियो में बाढ़ आना स्वाभाविक है । वन काटने से भूमि अपरदन में भी वृद्धि होती है । ऐसी योजनायें जिनमें हम अपने वन भी खो दें, भूमि की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी से भी हाथ धो बैठें और बाढ़ को भी न्योता दें किसी भी दृष्टि से बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं कही जा सकती । जब कि प्रत्येक देश अपनी भूमि की एक-२ इंच जमीन के लिये लड़ मरता है हम स्वयं ही, अपनी योजनाओं से अपनी मूल्यवान मिट्टी को खोते हुए देखते रहते हैं और यह अहसास भी नहीं कर पाते कि कितनी बड़ी हानि हम अपने राष्ट्र की कर रहे हैं । जब कि भावना तो यह होनी चाहिये कि :

"खाके वतन का मुझको हर जर्रा देवता है'
मेरे ज़हन का सब कुछ इस मुल्क पर फिदा है।"

अरस्तू ने कहा था कि "मिट्टी पौधों का पेट है।" क्या हम यह भी नहीं समझ पा रहे हैं कि इस पेट को लात मार कर हम अपने ही पेट पर लात नहीं मार रहे।

कहा अरस्तू ने था इक दिन
मिट्टी है पौधों का पेट
इसे हानि पहुंचा कर मानव
नहीं भर सकेगा निज पेट

जिस धरती को वृक्ष-वनस्पति विहीन कर दिया जाता है क्या कभी उसकी पुकार भी सुनी है ?, वहाँ अपरदन बढ़ता है भूमि की जल सोखने की क्षमता घटती फलतः बाढ़ आती है :

तुमने मुझे वृक्ष-वनस्पति विहीन कर दिया
भूमि की कटान कैसे रुके जल को क्यों पिया।
तुम जलाशयों में डूब इस तरह गये मियां
शक्ल कल की तुमको भला कैसे दीखती कहां।

जैनेटिक रिसोर्सेज-हिमालय महत्त्वपूर्ण

पौधों की ऐसी अनेक जातियाँ जो केवल भारतवर्ष में ही होती हैं, उनमें अधिकतम हिमालय में पाई जाती हैं। प्रत्यक्ष है कि हिमालय में किसी भी विकासकार्य को हाथ में लेते हुए जिसमें बड़े पैमाने पर पौधों को नष्ट करना पड़ता हो, अत्यन्त सावधानी बरतनी चाहिये। किसी भी देश के लिए उसके जैनेटिक रिसोर्सेज उसके अत्यन्त मूल्यवान निधि हैं। अतः कोई भी ऐसा कार्य जिसमें पौधों जानवरों. सूक्ष्म जीवों का बहुत बड़े पैमाने पर विनाश होता हो, विशेष रूप से हिमालय में, उसके गम्भीर परिणाम होंगे। हिमालय में अतः बड़े बिजलीघरों जलाशयों एवं बाँधों को बनाना बुद्धिमानी नहीं प्रतीत होती क्योंकि इनसे भूमि के बहुत बड़े क्षेत्र से पौधों का सफाया करना पड़ता है, भूमि को हानि अलग होती है। वनस्पतियां, जन्तु, भूमि. वन, जल हमारी मूल्यवान विरासत हैं। अपनी विरासत को हम स्वयं ही नष्ट न करें। अन्यथा आने वाली पीढ़ियों को हम क्या उत्तर देंगे।

आने वाली पीढ़ियां पूछेंगी वृक्ष वह कहा
जिनसे बुजुर्गों को मिले फूल फल दवाइयां।

वह हसीन वादियां नजारे गुम हुए कहां
जिनका बुजुर्गों ने जिक्र पुस्तकों में है किया।
अपनी विरासत को कोई फूंकता नहीं मियां
वायु जल वनस्पति में है हजारों खूबियाँ
आदमी इन्हीं के सहारे जमीं पे है जिया
जंगलों ने आज तक हमें दिया ही है दिया

भूकम्प सक्रिय इलाका

जिस इलाके में टिहरी बांध बन रहा है वह भूकम्प सक्रिय है। वैज्ञानिकों के अनुसार इस इलाके में भूकम्प सक्रियता बढ़ रही है। १९७१ से पूर्व प्रति वर्ष एक या दो भूकम्प आये, १९७४ में पाँच और १९७५ मे सात। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि बड़े बांध और जलाशयों से ऐसे क्षेत्रों में भी भूकम्प आ सकता है जहाँ पहले कभी भूकम्प न आया हो। टिहरी का २६० मीटर ऊंचा बांध विश्व के सबसे बड़े बांधों में से होगा, जलाशय में इकट्ठा ३ २ विलियन टन पानी कितना जबरदस्त दबाव डालेगा इसका अन्दाजा लगाया जा सकता है। इससे बेसिन में फाल्ट्स और फ्रैक्चर्स सक्रिय हो सकते है जिससे भूकम्प आ सकता है। हमारे ही देश में कोइना इस प्रकार के जलाशय प्रेरित भूकम्प का एक उदाहरण है।

यह कहा जा रहा है कि ऐसी दुर्घटना न होने पाये उसके लिए उचित सावधानियां वरती जा रही हैं। फिर भी भूकम्प की सम्भावना को नजर-अन्दाज नहीं किया जा सकता। वी० डी० सकलानी के अनुसार यदि टिहरी बांध भूकम्प या किसी अन्य कारण से टूटता है तब एक अत्यन्त विनाशकारी घटना होगी। मुनि की रेती से लेकर कलकत्ता तक पूरा गंगा बेसिन का सफाया हो जायेगा।

यह कहा जाता है कि टिहरी बांध के निर्माण में पहले ही करोड़ों रुपये व्यय हो चुके है अतः अब इस कार्य को बन्द करना न्यायसंगत नहीं होगा। किन्तु जिस कार्य से करोड़ों लोगों की जान को खतरा पैदा हो जाय ऐसे कार्य को किसी भी दशा में रोक देना ही एकमात्र विकल्प होगा। जहाँ तक बिजली उत्पादन और सिंचाई सुविधाएँ उपलब्ध कराने का प्रश्न है उसके लिए विकल्प विद्यमान हैं। और वह ये है कि एक बड़े के स्थान पर अनेक छोटे-२ पन बिजली घर बनाये जायें। सौर्य-ऊर्जा को बड़े पैमाने पर उपयोग करने के लिये कदम उठाये जायें। कपूर और बंसल (रुड़की विश्वविद्यालय) के अनुसार चीन में हर साल ९००० छोटे बिजली घर बनाये जाते है, तब हम ऐसा क्यों नहीं कर सकते। रूस में भी छोटे बिजलीघरों को बनाना प्रारम्भ किया जा रहा है।

आज चीन में ८७०० छोटे पन बिजलीघर हैं। बड़े जलाशयों में पानी जमा करने से जल प्रदूषित हो जाता है। गंगा जल संसारमें अद्‌भुत जल है। इसमें रोग निवारण की अद्‌भुत क्षमता बताई जाती है। और इसकी क्षमता के क्या कारण हैं इसके बारे में अभी तक कोई निश्चित जानकारी नहीं है। अतः यह विचार करना भी आवश्यक हो जाता है कि यदि बांध बनाने से गंगा जल की पवित्रता और अद्‌भुत क्षमता समाप्त हो जाती है तब बाँध बनाने के समर्थकों के पास इसके लिए क्या विकल्प होगा।

———

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	१०	नवनवेषोन्मुखी	नवनवोन्मेषोन्मुखो
६	२८	स उनः	स उ नः
७	२९	निष्टप्ता	निष्टप्तं
७	३३	पर्जन्य	पर्जन्यः
७	३३	प्रर्जन्यादन्नसंभव	प्रर्जन्यादन्नसंभवः
८	१	हव्यम्रंकृतम्	हव्यमकृतम्
८	२	स्वध्यान्नेन	स्वधयान्नेन
८	१९	विश्वधापसं	विश्वधायसं
८	२६	शध्यतां	राध्यतां
८	२८	वनस्पतिः	वनस्पती
१०	१०	विभिषिका	विभीषिका
१०	१४	तविर्षेभिरुर्मिःमि	तविर्षेभिरूर्मिभिः
१०	१६	विनशन्	विनशन
११	१२	माते	मा ते
११	१२	हृदयमर्पिवम्	हृदयमर्पिपम्
११	१७	प्रकृति	प्रकृतिः
११	१८	लोकाः	लोकान्
११	३१	यायामि	याचामि
१२	६	वास्तून्युरमसिगमध्यै	वास्तून्युश्मसिगमध्यै
१२	८	हरिमा—चते	हरिमा च ते
१२	१७	य	यं
१२	३३	पृथिक्रुदश्यः	पृथिक्रुद्भ्यः
१६	६	पल	पल =
१६	१८	लखाराव	लखारांव
३२	१	रमिष्टय	रभिष्टय
३२	१	पीत ये	पीतये
३२	१	रमि सूवन्तु	रमिस्रवन्तु
३२	५	आपोघ्न्व्याः	आयोऽघ्वन्याः
३२	१९	गंगोतरी	गंगोत्री
४९	१	मैं	में
४९	२	पर्यावंवण	पर्यावरण

क्या आप जानते हैं ?

I—भारत का कुल थल क्षेत्र ३२८ मिलियन हेक्टेयर है। इसका प्रायः आधा क्षेत्र अर्थात् १५० मिलियन हेक्टेयर, जल एवं वायु अपरदन, लवणता, क्षारता, जलप्लवन आदि के कारण अपकर्ष की विभिन्न स्थितियों में है।

अतः कोई आश्चर्य नहीं कि देश की आधी जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे है।

II—१३० मिलियन टन खाद्यान्न पैदा करने में भूमि से लगभग १८ मिलियन टन खनिज लवण (पोषक तत्व) लिये जाते हैं।

उर्वरक और जैव स्रोतों द्वारा भूमि को १०.३ मिलियन टन खनिज लवण (पोषक तत्व) दिये जाते हैं।

इस प्रकार भूमि बैंक को ६.७ मिलियन टन खनिज लवण का घाटा रहता है। क्या इस प्रकार ओवर ड्राफ्ट से कोई भी बैंक दिवालिया नहीं हो जाएगा ? साथ ही हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि अपरदन द्वारा भूमि प्रतिवर्ष ८४ मिलियन टन पोषक तत्व खो रही है।

III—भारत की ४० मिलियन हेक्टेयर भूमि बाढ़ से पीड़ित है। गंगा क्षेत्र में प्रतिवर्ष ८ मिलियन हेक्टेयर भूमि में बाढ़ आती है जिससे २५० करोड़ रुपये की वार्षिक हानि होती है।

क. १९५२ से पूर्व बाढ़ग्रस्त क्षेत्र २५ मिलियन हेक्टेअर था जो आज बढ़कर ४० मिलियन हेक्टेअर हो गया।

ख. १९५२ से देश में जिन बाँधों का निर्माण हुआ है उनके लिए ४ लाख हेक्टेअर भूमि से वनों को समाप्त करना पड़ा।

क्या 'क' और 'ख' में कोई सम्बन्ध है ?